हर्षनाथकाव्यग्रन्थावली

ओं नमस्सरस्वत्यै

उषाहरणनाटकम्

राग इमन

जय जय कुमतिविनाशिनि देवि,
मम अभिमत पुर तुअ पदसेवि ।
तनुरुचिनिन्दितकुन्दकभास,
आननरुचि शशिबिम्ब उदास ।
आसन धवल कमल शशिभाल,
श्वेतवसन लस नयनविशाल ।
वीणादण्ड कलश धरु हाथ,
जपमाला वरपुस्तक साथ ।
हर्षनाथकवि मनदय भान,
भगवति करिय अभय वरदान ॥१॥

गीतार्थे श्लोकः

या शुक्लाम्बुरुहासना सुनयना पूर्णेन्दुबिम्बानना
कुन्देन्दूज्ज्वलविग्रहा निजकरैस्संबिभ्रती पुस्तकम् ।
वीणामक्षगुणं सुधाद्यकलशम्ब्रह्मादिदेवार्चिता
सर्व्वाभीष्टफलप्रदा वितरतु श्रेयांसि सा शारदा ॥२॥

नान्द्यन्ते

सूत्रधारः—अलमतिविस्तरेण। आदिष्टोऽस्मि खण्डवलाकुलरत्नाकरसुधाकरेण कविपण्डितकुलहृदयसरसीरुहभृङ्गायमाणेन सकलराजकुलमुकुटरत्नायमानचरणकमलेन मिथिलामहीमहेन्द्रेण महाराज श्रीरलक्ष्मीश्वरसिंहदेवदेवेन यथाऽस्मत्सभापण्डितेन कविपण्डितकुलतिलकायमानेन सकराढीकुलनन्दनेन श्रीहर्षनाथशर्म्मणा विरचितमभिनवमुषाहरणन्नाम नाटकमभिनीयतामिति। तद्गृहिणीमाहूय संगीतकमवतारयामि तावत् [सर्व्वतः परिक्रम्य नेपथ्याभिमुखमवलोक्य]—प्रिये इहागम्यताम् ।

[प्रविश्य]

नटी—एसह्मि आणवेदु अज्जउत्तो[1] ।

एषाऽस्मि आज्ञापयतु आर्य्यपुत्र ।

सूत्र०—प्रिये पश्य सर्व्वतस्सुसमृद्धोयं वसन्तसमयः ।

तथाहि—

सम्फुल्लन्नवमल्लिकापरिमलःश्रीखण्डशैलानिलो-
माद्यत्कोकिलकामिनीकलकलः कन्दर्पबाणानलः ।
भृङ्गालीकुलकाकलीनववधूश्रेणीकटाक्षावली
निश्शङ्कम्भुवि सर्व्वतः प्रसरति प्राप्ते वसन्तोत्सवे ॥२॥

तदेनं वसन्तसमयमधिकृत्य सङ्गीतकमनुतिष्ठतु भवती ।

नटी—

जहाणवेदि अज्जउत्तो[1] [इति गायति] ।

वसन्त

मदननरेश विजय मनकाज,
लय परिजन अनुगन ऋतुराज ।
शोभित अलि तति मरकतमाल,
केशरमणिमय-छत्र विशाल ।
मारुत-कम्पितमाधवि-पुंज,
नाचत रसमय भवन-निकुंज ।

---

१ यथाज्ञापयत्यार्य्यपुत्रः ।

अलिकुलगुंजित गानविलास,
चम्पक किंशुक दीपकभास ।
कोकिलकलरव नृपतिनिदेश,
चलत समीरन दण्ड उदेश ।
निरखि सुरत विघटन अपराध,
करत कोप तँह मानक बाध ।
रसमय हर्षनाथकविभान,
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह रसजान ॥२॥

अपि च

उसरल जगभरि शिशिरपसार,
बसल सरस ऋतुपति बनिजार ।
पसरल सओदा मधुरस फूल,
अभिनव सौरभ प्रेम अमूल ।
तौलत दक्षिण पवन विचारि,
भमि भमि माँगत भ्रमर भिखारि ।
पिककुल करत दलालक काज,
गाहक तरुणी तरुणसमाज ।
हसित वचन लोचन दय दाम,
किनत सिनेह रतन सब ठाम ।

रसमय हर्षनाथकविभान,
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह रस जान ॥३॥

सूत्र०—प्रिये साधुगीतम्

[नेपथ्ये]

इदो इदो पिअसहीओ[1] ।

सूत्र०—[आकर्ण्य] कथमियं बाणपुत्री उषा कुम्भाण्ड-दुहित्रा रामया चित्रलेखयाऽप्सरसा च समं किमपि मन्त्रयन्ती इत एवाभिवर्त्तते । तदेहि आवामप्यनन्तरकरणीयाय सज्जीभवाव । [इति निष्क्रान्तौ]

प्रस्तावना ।

[ततः प्रविशति सखीभ्यां सहिता उषा ।]

गीत । राग कल्याण

तड़ितविनिन्दक सुन्दर वेस,
गजगामिनि कामिनि परवेश ।
अलक कलित आनन अभिराम,
जनि घन वलित विमल हिमधाम ।
अधर ललित नाशा अति शोभ,
कीर वैसल जनु बिम्बक लोभ ।

---

[1] इतः इतः प्रियसख्यौ ।

निरखि युगलकुच पङ्कज काँति,
चललि रोमावलि मधुकर पाँति ।
अविरल नूपुरकिङ्किणिराव,
मदनविजय जनु सामग गाव ।
रसमय हर्षनाथकवि गाव,
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझ भाव ॥४॥

राग कान्हड़ा

उपचित हृदय अनङ्ग, चललि रमणि सखिसङ्ग ।
मन्द मन्द परचार, जनि आलस कुचभार ।
अलस नयन चित चोर, जनि मद भरल चकोर ।
बोल बचन हँसि मन्द, अमिय बरिस जनु चन्द ।
हर्षनाथ कवि भान, मिथिलापति रसजान ॥५॥

रामा—सहि बाणपुत्ति उक्कण्ठिदा व्व लक्खीअदि भोदी ताकिं कोवि पुरसो तुज्झ हिअए वट्टदि[१] ।

उपा [सप्रणयकोपम्]—किम्पि हिअए कदुअ यहा तहा जप्पसि ता इदो दूरं ओसर[२] [इति पुष्पमालया ताड़यति] ।

१ सखि बाणपुत्री उत्कण्ठितेव लक्ष्यते भवति तत्किं कोऽपि पुरुषस्तव हृदये वर्त्तते ।
२ किमपि हृदये कृत्वा यथातथा जल्पसि तदितो दूरमपसर ।

चित्रलेखा—सहि बाणपुत्ति अप्पणो सहीअणे का लज्जा ताकधेहि सच्चं[१] ।

उपा—[सलज्जमधोमुखीसंस्कृतमाश्रित्य]—
गौरीशिवजलक्रीडा यदा दृष्टा मया सखि ।
ततः प्रभृति केनापि हेतुना व्याकुलम्मनः ॥३॥

रामा—कामेणेति भणिदव्वं[२] ।

उपा । [सलज्जमधोमुखी तिष्ठति] ।

चित्र०—सहि देईए गोरीए प्पसादेण सव्वं सुलहं होदि ता तामेव्वप्पसादेदुं गच्छम्ह[३] । [इति सर्वा देवीगृहमुद्दिश्यगमनन्नाटयन्ति]

सोहनी

सखि सब मङ्गलय मन अनुमानी,
गिरजा पूजन चललि सेयानी ।
अक्षत चानन सिन्दुर फूले,
बेलपत्र नव कय समतूले ।
पुजलनि मनदय भवानि चढ़ाए,
कयलनि विनती माथ नवाए ।

१ सखि बाणपुत्रि आत्मनः सखीजने का लज्जा तत्कथय सत्यम् ।
२ कामेनेति भणितव्यम् ।
३ सखि देव्या गौर्याः प्रसादेन सर्वं सुलभं भवति तत्तामेव प्रसादयितुं गच्छामः ।

मँगलनि वर पुनु दुहु कर जोरी,
आशा मोर परिपूरथु गौरी।
हर्षनाथकवि मन मन लाए,
सबखन भगवति रहथु सहाए ॥६॥

[ततः प्रविशति परितुष्टा गौरी]

सोहनी

निज जन आरति हरण उदेश,
हिमगिरिनन्दिनि देल परवेश।
जनिक चरण युग दरशन लागी,
हरिहर करथि कतेक तप जागी।
भगति विवश सेह दरशन देला,
बाणकुमरि अभिमत बुझिलेला।
कहलनि माधव शुचिदल पाए,
हरितिथि सपनमिलत पतिआए।
ई कहि अन्तर्हित भयगेली,
बाणकुमरि सुनि हरिषित भेली।
हर्षनाथ कवि मन मनलाए,
सब खन भगवति रहथु सहाए ॥८॥

[इति निष्क्रान्ता।]

रामा—सहि बाणपुत्ति सम्पण्णमणोरहा तुमं देइए प्पसादेण[1]।

उषा—[सलज्जमधोमुखी तिष्ठति]

चित्र॰—सहि बाणपुत्ति तुज्झ तादस्स घरे आनन्दद्धुणी सुणीअदि ता अह्मे धि तहिं गच्छ्म[2]।

[इति निष्क्रान्ताःसर्व्वाः।]

इति उषावरलाभो नाम प्रथमोऽङ्कः ॥ १ ॥

अथ द्वितीयाङ्कः

[ततः प्रविशति बाणासुरः]

राग परज

बाणनृपति जग देल परवेश,
काँपथि धरती कच्छपशेश।
सहस्रबाहु गिरि सदृश शरीर,
नयन निरखि केओ रहथ न थीर।
मद्यपान कर लोचन लाल,
काल सदृश तनु वदन कराल।

---

१ सखि बाणपुत्रि सम्पन्नमनोरथा त्वं देव्याः प्रसादेन।
२ सखि बाणपुत्रि तव तातस्य गृहे आनन्दध्वनिः श्रूयते तद्वयमपि तत्र गच्छामः

सकल भुवन जन तृण सम जान,
भुजबल राख अधिक अभिमान।
रसमय हर्षनाथकवि गाव,
श्रीलक्ष्मीश्वरसिंह बुझु भाव ॥१॥

बाणः—कः कोऽत्र भोः।

[प्रविश्य]

दौवारिकः—जअदु जअदु देओ[1]।

बाणः—दौवारिक, सत्वरं मन्त्रिराजं कुम्भाण्डं प्रवेशय।

दौवा०—यथाणवेदि देओ[2]।

[इति निष्कान्तः]

राग परज

दूत वचन सुनि नृपति निदेश,
शङ्कित मन्त्रिराज परवेश।
मन गुनि कत विध करथि विचार,
कोन परि खेपब नृपदरबार।
निरखि हमर अति सुन्दर रीति,
किदहु होएत नृप मानस प्रीति।
कीदहु हमर जानि किछु दोष,
बाणनृपति मन उपजत रोष।

---

१ जयतु जयतु देवः।
२ यथाज्ञापयति देवः।

अनुछन मन चिन्तित हो आज,
परम कठिन नृप सेवन काज।
हर्षनाथकवि मनदय गाव,
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझु भाव ॥२॥

कुम्भाण्डः—जयति जयति महाराजः।

बाणः—मन्त्रिराज, इहास्यताम् [इत्यालिङ्ग्योपवेशयति]।

[उपविश्य]

मन्त्री—देव, हर्षविशेषो लक्ष्यते तत्किं हरप्रसादेन कोपि वरो लब्धः?

बाणः—अथ किम्।

कुम्भा—विशेषेण कथय।

बाणः—कार्त्तिकेयदत्तध्वजपतनेन महद्युद्धमिति।

कुम्भा—महाराज, कुसृष्टिपुष्टोऽसि न भद्रं कृतं नूनमनेन वरेणासुरकुलं क्षयं यास्यति।

बाणः—[सरोषं] आः पाप कुम्भाण्ड ब्रह्माण्डस्फोटनं वाचा करोषि नाहं कस्मादपि बिभेमि शृणु रे संग्रामकातर।

इन्द्रादयो मम त्रासात्स्वाङ्गसङ्गोपना पराः।
परे के सन्ति भुवने ये योत्स्यन्ति मया सह ॥१॥

कुम्भा०—यथा वदति देवः। [ततः प्रपतति मयूरध्वजः।]

बाणः [दृष्ट्वा सहर्षं]—पश्य पश्य मन्त्रिराज पतितो मयूरध्वजः

तन्नूनमचिरेण मम बाहुसहस्रधारणं सफलतामेष्यति तदेहि गौरीशङ्कराभ्यां पुष्पाञ्जलिदानायेति

[निष्क्रान्तौ]

[विष्कम्भकः ।]

[ततः प्रविशति रामाचित्रलेखाभ्यां सहित पुरुषसङ्गचिह्निता]

उषा [सवैक्लव्यम्]

कालङ्गड़ा

सपन देखल एक नागर धीर,
तन्हि मोर धर्षित कयल शरीर ।
फूजल चिकुर फूजल मोर चीर,
आभरण एक रहल नहिँ थीर ।
आनन मलिन घाम भरि गेल,
कोन पुरुष मोहि सङ्गम देल ।
भल छल मरण होइत वरु आज,
के की कहत तकर हो लाज ।
रसमय हर्षनाथकवि भान,
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह रस जान ॥३॥

[इति शिरसि हस्तन्निधाय कलङ्कबाधान्नाटयति]

रामा—[सविश्रम्भम्] सहि समस्ससिहि समस्ससिहि ण क्खु कोवि तुज्झ दोसो हुविस्सदि सुमिरेहि सुमिरेहि देइए गोरिए वअणं[1] ।

[इति सर्वं स्मारयति]

उषा—[सानन्दलज्जं स्मरणमभिनयति]

रामा—सहि लद्धमणोरहा तुमं ता कधेहि विसेसेण सविणवुत्तं[2] ।

उषा—[सलज्जं गीतेन कथयति]

सोहनी

सखि हे यतन दय सुनु मोर बानी,
करिय उपाय हृदय अनुमानी ।
सपन समय एक सुन्दर रूपे,
देखल नागर मदन सरूपे ।
तसु मुख लखि तनु पुलकित भेला,
तन्हि पुनि हसि मोहि कर लेला ।
रसमय वचन बोलथि पुनु धीरे,
कोन परि रहओ तखन चित थीरे ॥

१ सखि समाश्वसिहि समाश्वसिहि न खलु तव कोऽपि दोषो भविष्यति स्मर स्मर देव्या गौर्या वचनम् ।

२ सखि लब्धमनोरथा त्वं तत्कथय विशेषेण स्वप्नवृत्तम् ।

तखनुक अवसर कि कहब तोही,
कहइत लाज निवारय मोही ।
रसमय हर्षनाथकवि भाने,
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह रस जाने ॥४॥

अपि च

मालव

सुनु सखि ओरे सरस देखल जनि सुपुरुष,
तसुमुख सुमरि सुमरि होअ कत दुख ।
तनिबिनु ओरे जत अछि एहि जगतीतल,
शीतल से सभ दुखदय बीतल ।
जग भरि ओरे घर घर, हँसअ सकल जन,
मोर मन, तन्हि बिनु थिर नहि कउखन ।
तन्हि पहु ओरे होएत समागम कोनपरि,
हरिहरि, करिय उपाय यतन भरि ।
छनछन ओरे मदन दहन दह मोर तनु,
सखि सुनु, आब न जिउब हम तन्हि बिनु ।
रसबुझु ओरे लक्ष्मीश्वरसिंह गुणमय,
मनदय, हर्षनाथ भन रसमय ॥५॥

[इति विरहवेदनामभिनयति ।]

रामा—सहि समस्ससिहि समस्ससिहि[1] ।

---

१ सखि समाश्वसिहि समाश्वसिहि ।

[चित्रलेखाम्प्रति] सहि चित्तलेहे को उवाओ हुविस्सदि[1] ।

चित्र—कीरिशो अविज्जादजणसङ्गमोवाओ[2] ।

उषा—एवं चिअ मज्जीअणं पि दुल्लहं हुविस्सदि[3] [इति मूर्च्छति]

रामा—समस्ससिहि समस्ससिहि[4] [इत्युत्थाप्य नलिनीदलेन वीजयति]

चित्र—[जलं सिञ्चति]

उषा—[संज्ञां लब्ध्वा सवैक्लव्यम् ।]

मालव

पहु बिनु किछु नहि भावय रे, कि करब परकारे ।
कोन परि होएत समागम रे, सखि कहु विचारे ।
मलयपवन नलिनी दल रे, चानन घनसारे ।
परसि अधिक तनु तापय रे, जनि निधुम अँगारे ।
सुमरि सुमरि तसु आनन रे, पीयुषसम बानी ।
अनुछन रहत विकल मन रे, सखि सुनह सेआनी ।
जँओ नहि होयत समागमरे, कि कहब सखि आने ।
आनि गरल घोरि पीउब रे हम तेजब पराने ।

---

१ सखि चित्रलेखे क उपायो भविष्यति ।
२ कीदृशोऽविज्ञातजनसङ्गमोपायः ।
३ एवञ्चेन्मज्जीवनमपि दुर्लभं भविष्यति ।
४ समाश्वसिहि समाश्वसिहि ।

हर्षनाथकविशेखर रे, रसमय इहो गावे ।
लक्ष्मीश्वरसिंह गुणमय रे मनदय बुझु भावे ॥६॥

[ततश्चन्द्रकरस्पर्शेन दुःखमनुभूय मूर्च्छति सख्यौ वीजयतः
पुनः संज्ञां लब्ध्वा गीतेन कथयति]

सोहनी

सखि सखि करह एकर उपचारे ।
रहत विकल मन दहत सतत तन चान किरण दुरवारे ।
कुमुदबन्धु चिरसिन्धुतनूभव कुन्दकुसुमसमधामे ।
एहन चान तन दहन सतत क्षण अमित हृदय परिनामे ।

एतदर्थे श्लोकः

क्षीराब्धिजातः कुमुदस्य बन्धुः कुन्दप्रसूनप्रतिमांशुरेषः ।
तथापि चन्द्रस्तनुदाहकारी स एष हृच्छ्यामलतास्वभावः॥१॥
बड़वानल जक उदर गोड़ धरु किए जलनिधि नहि चाने ।
कालकूट सम जानि मदनहर किय न कयल तसु पाने ॥

अत्रार्थे श्लोकः

और्वाग्निवन्नो शशिनं जुगोप यद्वब्धिरेनं विषवन्मुमोच ।
क्रूरन्तथाप्येनमुदीक्ष्य शम्भुः पपौ दयालुर्विषवन्न कस्मात्॥२॥
राहुदशन बिच जाय जिबए पुनि शशि विरहिन जिवघाती ।
तसु डर यमहु डेराथि जगत मह जे जन अति उपपाती ॥

एतस्मिन्नर्थे श्लोकः

स्वर्भानुदष्टोऽपि जहाति नासून्वियोगिनं प्राणहरः सुधांशुः ।
वितर्कयामि स्फुटमत्र तेन यमोऽपि दुष्टान्नितरामिभेति ॥३॥
धैरज धय रहु, अचिर मिलत पहु, होएत सुशीतल चाने ।
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथकवि भाने ॥७॥

[इति मूर्च्छति]

रमा—[उषाया नाडीन्निरूप्य संस्कृतमाश्रित्य]

कदाचिद्वलते नाडी कदाचित्स्थिरताङ्गला ।
एतन्निरूपणेनास्या ज्ञायते चरमा दशा ॥४॥

हाहद्धि का उषाओ हुविस्सदि[१] [चित्रलेखाम्प्रति]
सहि चित्तलेहे पेक्ख पेक्ख सहीए अवत्थं[२] ।

सोहनी

कि कहब हे सखि धनिक विशेष
अब न जिउति अतिविरहकलेश ।
परस दगध सेज कि कहब तोहि,
तेँ तसु जीवन निश्चय मोहि ।

१ हा हताऽस्मि क उषायो भाविष्यति
२ सखि चित्रलेखे पश्य पश्य सख्या अवस्थाम् ।

तसु तनुवेदन देखल न जाय,
वसन भूषण तेँ भूमि लोटाए।
नाड़िक भेद बुझय अनुकूल,
करकङ्कण गेल बाहुक मूल।
कीदहु जीवइत अछि सुकुमारि,
बुझय चिकुर उर परसि विचारि।
रसमय हर्षनाथकवि भान,
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह रस भान ॥८॥

इत्युभे विलपतः

चित्र——हा हदह्मि कधं उश सहीए प्रियजणं जाणिस्सं[1]

रामा——[संस्कृतमाश्रित्य]।

मुहुर्भ्रान्तिर्म्मुहुर्म्मूर्च्छा मुहुस्संज्ञामुहुर्द्धृतिः।
सखीहृदयबाधाहि हन्तास्मास्वपि दृश्यते ॥५॥

[चित्रलेखाम्प्रति गीतेन]

सोहनी

हे सखि हे सखि करह उपाय,
विरह वेदन सखि सहलो न जाय।
सपन पुरुषरूप मन अवधारी,
लय पट त्रिभुवन, लिखह विचारी।

१ हा हताऽस्मि कथं पुनः सख्याः प्रियजनं ज्ञास्यामि।

सब तरु सब चीन्हह तोँहँ नारी,
अपन सखी कहु लागु गोहारी।
सखि मोर तसु रूप मन अवधारी,
पट देखि निज प्रिय चिन्हति विचारी।
रसमय हर्षनाथकवि भाने,
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह रस जाने ॥९॥

चित्र——[सशिरः कम्पं]-सहि रमणिज्जं क्खु मन्तिदं[1]
[इति तथा करोति]।

मंझौटी

लेख करगहि ललितलिखनी सकलरंग अनाए ओ।
लिखथि मनदय चित्रलेखा विविधपट्ट बनाए ओ।
देव दानव सिद्ध चारण यक्ष राक्षस किन्नरा।
लिखल रघुकुल सकल यदुकुल अनेक अछि जग नरवरा।
लेख कर गहि बाणतनया देखल पट मनलाए ओ।
निरखि अनिरुध रूप मनगुनि अँगुरि देल देखाए ओ।
कयल सखिसँ अधिक विनती करह सङ्ग उपाए ओ।
हर्षनाथ विचारि मन गिरिजा चरण हिय लाए ओ ॥१०॥

१ सखि रमनीयं खलु मन्त्रितम्।

चित्र—[सशोकं][1] एसो क्खु समुद्दमज्झणिम्मिददोआर-वदीणअरमज्झे वसइ ता कठिणो अस्स सङ्गमोवाओ ।

उषा—[सोत्कण्ठम्]

योगिया

जाह द्वारिका आजे, तेजि लाजे, मनदय करु मोर काजे।
योगबल तोंहें सब ठामे, निज कामे, करह गमन अनुपामे ।
जँ तोंहे करह बेआजे, मोर काजे हम न जिउब सखी आजे ।
दक्षिणपवन भेल वामे, परिनामे, हनय मदन मोहि ठामे ।
हर्षनाथकवि भाने परमाने, मिथिलापति रस जाने ॥११॥

[इति चित्रलेखाचरणयोर्निपतति]

चित्र—[आलिङ्ग्योपवेश्य सकरुणम्]

दोहा

जाए द्वारका आज हम कामतनय यदुवीर ।
आनि मिलाएब तोहि सँग, धरह सुचेतनि धीर ॥१२॥

[इति सत्वरगमनमभिनयति]

१ एष खलु समुद्रमध्यनिर्मितद्वारवतीनगरमध्ये वसति तत्कठिनोऽस्य सङ्गमोपायः ।

उषा—[निरूप्य][1] कधं गदाज्जेव पिअसही चित्तलेहा ।

[रामाम्प्रति संस्कृतमाश्रित्य]

बहुविनयवितानैः प्रेरिता चित्र-लेखा
कुसुममृदुलदेहा कामिनी दूरदेशम् ।
अविदितबहुभारा द्वारकां सा प्रतस्थे
परहितकरणेच्छुर्न स्मरत्यात्मबाधाम् ॥६॥

रामा । सहि सच्चं[2] ।

उषा—ता अह्मेवि जहा तहा समअणअणत्थं पुप्फवाडिअं गच्छम्ह[3] !

[इति निष्क्रान्ते]

इति चित्रलेखाप्रस्थापनो नाम द्वितीयोऽङ्कः ॥

---

१ कथं गतैव प्रियसखी चित्रलेखा
२ सखि सत्यम् ।
३ तदा वामपि यथा तथा समयनयनार्थं पुष्पवाटिकां गच्छावः ।

अथ तृतीयोऽङ्कः

[ततः प्रविशति पथिश्रमन्नाटयन्ती चित्रलेखा]

एस[1] समुद्दो इअं सा दोआरिया इणं क्खु अनिरुद्धस्स घरं ता एत्थ प्पविशामि [इति प्रवेशमभिनयति]

[ततः प्रविशति चिन्ताकुलोऽनिरुद्धः सवैक्लव्यं]

मातङ्गेन समानकोमलगतिः कोपे तथा कोमला
मृद्वङ्गी मृदुभाषिणी मृदुवया हास्येऽपि या कोमला ।
स्वप्ने मां समुपागता विधिवशात्सर्वात्मना कोमला
जाता सा कठिना कथं मम पुनर्ह्लेव चित्तङ्गता ॥१॥

अपि च

सोहनी

हरि हरि देखल अपरुप रामा ।
देखइत जनम सुफल कय मानल पूरल लोचनकामा ॥
तड़ित चपल रुचि कठिन कनकमयवल्ली करि अवधाने ।
निजकौशलपरगासन कञ्जज तसु तनु करु निरमाने ॥
मदन धनुष हर नयन दहन तहँ श्यामल केशर शेषे ।
लखि चतुरानन भाग जुगल करि करु तसु भौंह विशेषे ॥

१ एष द्रमुद्रः इयं सा द्वारका इदं खलु अनिरुद्धस्य गृहं तदत्र प्रविशामि ।

मृग अञ्जन खञ्जन मदगञ्जन लोचन सम निज काँती ।
मानल पङ्कज तें जनि कंजज निज पद देल तसु छाती ॥
अमलकमलमुख लखि रजनीकर अन्तर श्यामलकाँती ।
कनककुम्भ कुच जुगल दम्भ लखि विदलित दाड़िमछाती ॥
दाड़िमबीजदशन बन्धुकमयदशनवसन निरमाने ॥
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भने ॥१॥

अपि च

देश

रे मोर प्राण पियारी, सुकुमारी ।
कखन मिलति वरनारी ॥
सपन दरश मोहि भेला, बिहदेला ।
कओन हरन कयलेला ॥
लोचन विषमय बाने, नहि आने ।
जे मोर हरल पराने ॥
कि करब हम परकारे, सनसारे ।
तनि बिनु लागु अन्हारे ॥
हर्षनाथकवि भाने, परमाने ।
मिथिलापति रस जाने ॥२॥

[इति चिन्तामभिनयति]

चित्र—कधं एसो सो अणिरुद्धो किम्पि चिन्तआणो चिट्ठदि ता यावदस्स हिअदं तक्केमि[1] [इत्यपावार्य्य तिष्ठति]

अनि—पुनर्मातङ्गेनेत्यादि पठति ।

चित्र—[निपुणन्निरूप्य] णंएदिणा[2] अस्स वअणोवण्णासेण तक्कीअदि एदेणावि जणेण अह्माणं सा पिअसही सविणे दिट्ठा ता विस्सद्धउवसप्पामि [इत्युपसर्प्पति]

अनि—[दृष्ट्वा सहर्षं] कथमियं चित्रलेखा ? चित्रलेखे, एषोऽनिरुद्धः प्रणमति ।

चित्र—सम्पण्णमणोरहो होहि[3] ।

अनि—[स्वगतम्] परमनुगृहीतोऽस्मि [प्रकाशं] चित्रलेखे सकलैश्वर्य्यवत्याः सिद्धयोगिन्याः किमत्रागमने प्रयोजनं भवत्याः ।

चित्र—गीतेन कथयति ।

खम्माच

सखि मोर बाणकुमारी, तुअ गुण लुबुधलि से वरनारी ।
सपन समय तोहि देखी, मिलन मनोरथ करए विशेषी ॥

१ कथमेष सोऽनिरुद्धः किमपि चिन्तयन् तिष्ठति तद्यावदस्य हृद्गतं तर्कयामि ।

२ नन्वेतेनास्य वचनोपन्यासेन तर्क्यते एतेनापि अनेनास्माकं सा प्रियसखी स्वप्ने दृष्टा तद्विश्रब्धमुपसर्प्पामि ।

३ सम्पन्नमनोरथो भव ।

तुअ विनु धरय न धीरे, चेतन चिकुर चेतय नहि चीरे ।
अनुछन जप तुअ नामे, मनदय तनिक पुरिअ मनकामे ॥
हर्षनाथकवि भाने, नृपलक्ष्मीश्वरसिंह रस जाने ॥ ३ ॥

अपि च

केदार

कि कहब तनिक विशेस (माधव) कहितहु होअ कलेस ।
आनन करतल राखि (माधव) दिवस गमावथि भाखि ।
मदनदहन दह देह (माधव) लागु विपिनसम गेह ।
निरखि सरसशशि काप (माधव) मलयपवन तनु ताप ।
तुअ सङ्गम अभिलाष (माधव) छनभरि जीवन राख ।
अचिर चलिअ तसु धाम (माधव) पुरिअ तनिक मनकाम ।
हर्षनाथकवि भान (माधव) मिथिलापति रस जान ॥४॥

अनि—चित्रलेखे भवत्याः प्रियसखी मयापि स्वप्ने सङ्गता तदवधि निर्दयः कन्दर्प्पो मां विशिखैर्निकृन्तति तस्मादनुगृहाण मांशोणितपुरनयनेन [इतिचित्रलेखापादयोर्निपतति]

चित्र—[आलिङ्ग्योपवेश्य] कधं अणुग्गहेप्पत्थणा एव्वं होदु[1] [इत्यनिरुद्धेन सार्द्धं गमनमभिनयति]

चित्र—पेक्ख यादअणन्दण शोणिअपुरं एवं इदं क्खु

१ कथमनुग्रहेऽप्यभ्यर्थना एवं भवतु ।

पिअसहीए णिज्जणं सअणघरं ता एत्थ तुमं चिट्ठ अहं पिअसहीं आणेमि[1] । [इति निष्कान्ता]

अनि—

सोरठ

कखन आउति धनि पासे, पूरत हृदयअभिलासे ।
नूपुरशबद सुनि काने, कखन होयत परमाने ।
कखन देखब भरिआँखी, रहय न धैरज राखी ।
एखनुक एकछन मोही, कोटिकलप सम होही ।
हर्षनाथ कवि भाने, आरत नहि परमाने ॥५॥

[इत्युत्कण्ठानाटयति]

[ततःप्रविशति] चित्रलेखा—इअं पुप्फवाडिआ एत्थ पिअसही हुविस्सदि ता एत्थ प्पविशामि[2] [इति प्रवेशमभिनयति] [ततः प्रविशति] उषा रामा च ।

उषा—कधं अज्जावि ण आअदा पिअसही चित्तलेहा[3] ।

रामा—[निपुणन्निरूप्य सहर्ष] पेक्ख पेक्ख इअं आअदासा[4] ।

---

१ प्रेक्षस्व यादवनन्दनशोणितपुरं प्राप्तं इदं खलु प्रियसख्या निर्ज्जनं शयनगृहं तदत्र त्वं तिष्ठ अहं प्रियसखीमानयामि ।

२ इयं पुष्पवाटिका अत्र प्रियसखी भविष्यति तदत्र प्रविशामि ।

३ कथमद्यापि नागता प्रियसखी चित्रलेखा ।

४ प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व इयमागता सा ।

उषा—[दृष्ट्वा सहर्षमालिङ्गय] सहि चिरेण लोअणाणि शीदलेसि कधेहि आणीदो सो[1] जणो ।

चित्र—अधइ[2]

उषा—कहिं चिट्ठदि[3] ।

चित्र—तुज्झच्च शअणघरे चिट्ठदि ता तुमं पि अहिसारोचिद वेशं कदुअ तत्थ अहिसर[4] ।

रामा—

कल्याण

अभरन बसन करिअ तनु साजे,
त्वरित चलिअ सखि पहुकसमाजे ।
जखन शयनगृह करिअ पयाने,
छन भरि करब हृदयसमधाने ।
ठाढ़ि रहब मुखझाँपि लजाई,
हठहि बोलिअ जनु कोटि उपाई ।
बहुविध विनति जनाबथि प्रीति,
तखन करब सखि नेहक रीती ।

---

१ सखि चिरेण लोचने शीतलयसि । कथय कथय आनीतः स जनः ।

२ अथ किम् । ३ कुत्र तिष्ठति ।

४ तव शयनगृहे तिष्ठति । त्वमपि अभिसारोचितवेशं कृत्वा तत्राभिसर ।

रसमय हर्षनाथकवि भाने,
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह रस जाने ॥६॥

सोहनी

उषा—

हे सखि हे सखि परिहरि मोही,
करजोरि विनति करिअ हम तोही।
प्रथमसमागम अधिक तरासे,
सुमरि सुमरि जिव उड़य हतासे।
चलय न चरण सुभय नहि मोही,
घाम भरल तन की कहब तोही।
पुलकभरय पुनु कांपय देहा,
हम न जायब सखि हुनि पहुगेहा।
रसमय हर्षनाथकवि भाने,
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह रस जाने ॥७॥

[ततः सख्यौ हस्तं गृहीत्वा बलान्नयतः। सा च सभय-लज्जं शनैर्गच्छति]

रामा—सहि चित्तलेहे पेक्ख पेक्ख सहीए रूवं[१]।

चित्र—[निपुणन्निरूप्य गायति]

१ सखि। चित्रलेखे प्रेक्षस्व प्रेक्षस्व सख्या रूपम्।

केदारा

चलति शयनगृह सुन्दरि (सजनी)
नीलवसन तनु साजि।
कनकलता जनि वेसल (सजनी)
अविरल मधुकरराजि॥
खटिक बिन्दु अरु सिन्दुर (सजनी)
बिन्दु विराजित भाल।
जनि पङ्कज दल रवि शशि (सजनी)
उदित भेल एक काल॥
ललित दशन रुचि अनुपम (सजनी)
अधरनवलदल राज।
जनि बन्धूक कुसुम तर (सजनी)
विकसितकुन्दसमाज॥
चरणजुगलअनुरञ्जित (सजनी)
ललितजुगल उरु शोभ।
गज युग पाणि पसारल (सजनी)
जनि नव पल्लव लोभ॥
जगतजननीपदसेवक (सजनी)
हर्षनाथकवि गाव।

रसमय लक्ष्मीश्वरसिंह (सजनी)
नृप बुझु मनदय भाव ॥८॥

अपि च

मालवरागे गीतम्

चललि केलिगृह सुन्दरि रे, सखि कर गहि लेला।
प्रथमसमागम मन गुनि रे, तनु पुलकित भेला।
ललित कोर मुख पङ्कज रे, छवि देत विशेपे।
जनि पूरण शारद शशि रे, दामिनि परिवेपे।
चिकुर विरचि कसि बान्हल रे, मुखसुन्दरसारे।
अमिअ लोभ शशि मण्डल रे, विषधर परचारे।
युवजनमानसहाटक रे, अनुछन कर चोरी।
तें जनि कुचयुग बान्हल रे, दिढ़ कञ्चुक डोरी।
हर्षनाथकविशेखर रे, रसमय इहो गावे।
लक्ष्मीश्वरसिंह गुणमय रे, मनदय बुझु भावे ॥९॥

[इति सर्वाश्शयनभवनप्रवेशमभिनयन्ति]

अनि—[दृष्ट्वा सहर्षं] कथमागतैव मत्प्रेयसी तद्यावदेनां निरीक्ष्य लोचने शीतलयामि [इति सानन्दरोमांचं पश्यति].

[ततस्सख्यौ बाणपुत्रीमनिरुद्धाय समर्पयतः]

अनि—[करे गृह्णाति]

रामा—[अनिरुद्धम्प्रति]

इमन

सुपुरुष हृदय विचारि रे, सुनिअ वचन अवधारि रे।
धनि मोर किछु नहि जान रे, राखब हिनक अभिमान रे।
पड़य हिनक जँओ दोष रे, करिअ तकर नहि रोष रे।
सहय लाख अपराध रे, सुजन करय नहि बाध रे।
हर्षनाथकवि भान रे, मिथिलापति रस जान रे ॥१०॥

अनि—परमनुगृहीतोऽस्मि [इति शिरस्यञ्जलिं घटयति। सख्यौ निष्क्रामतः]।

उषा—[सलज्जमधोमुखी तिष्ठति]

अनि—[उषाया मुखमुन्नमय्य]

गीत मुलतानी

विरह दगध मोर तनु अनुमानी।
वचन सुधारस सिंचह सेआनी ॥
बसन दूर करु आनन चन्दा।
नयन चकोर मोर करु आनन्दा ॥
कर जोड़ि विनती करिअ हम तोही।
एक बेरि नयन निहारिअ मोही ॥
अधरअमिअरस करु परगासे।
करिअ कृतारथ अनुगत दासे ॥

तुअ गुण बुझि अएलहु एहिठामे ।
परसनि भय परिपूरिअ कामे ॥
रसमय हर्षनाथकवि भाने ।
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह रस जाने ॥११॥

[इति शयने उपवेशयति]

[नेपथ्ये] इदो इदो पिअसही[1] ।

उषा—कथं पिअसहीओ आअच्छन्ति ता अहम्पि गच्छेमि[2] [इत्युत्थाय प्रचलित]

अनि—कथं गतैव प्रेयसी तदहमपि बहिर्भवनमाह्निककर्म्मणे गच्छामि [इति निष्क्रान्तः]

[ततः प्रविशतश्चित्रलेखारामे]

रामा—कधंप्पभादप्पाआ रअणी तधाहि[3]

गीत ललित

सखि सखि ललित समय लखु भोर ।
नागर नागरि रङ्गनि रङ्ग करि शयन करय प्रियकोर ॥
धीवरअङ्क मयङ्कतरणि चढ़ि शशिकरजाल पसार ।
उडुगन मीन बझाए चलल जनि गगनपयोनिधिपार ॥

१ इतः इतः प्रियसखी ।
२ कथं प्रियसख्यावागच्छतः तदहमपि गच्छामि ।
३ कथं प्रभातप्राया रजनी तथाहि

रविकरकलिततिमिरपटमोचन प्रकट अरुण तनुभास ।
लाज पुरुब दिश मुनल कुमुद दश लखि कमलिनि करु हास ॥
मलयपवन कम्पिततनु कमलिनि कोप अरुण करि अङ्ग ।
उपगत मधुकर करय निरादर कुमुदिनि सङ्ग पिशङ्ग ॥
पति वञ्चित रति युवति विकल मति करति सौति अभिशाप ।
पति गञ्जन सहि विविध वचन कहि करत दोष अपलाप ॥
गुञ्जत मधुप विहङ्गम कूजत शयन कुशल जनि भाप ।
हर्षनाथ कवि वचन सुधारस विरल रसिक जन चाप ॥१२॥

इदाणींपि पिअसही शअणघरादो ण आअदा [पुनर्न्निरूप्य] कधं आअदाज्जेव[1] ।

उषा—[झणझणन्नूपुरं सख्यावालिङ्गति]

रामा—सहि कधेहि कधेहि पढुम सङ्गम वुत्तम्[2] ।

उषा—[गीतेन]—

ललित

मनदय सुनिअ वचन सखि आजे ।
सुपहु समागम कहितहु लाजे ॥
रसमय पहु अञ्चल गहि लेला ।
लाज वदन मोर अवनत भेला ॥

१ इदानीमपि प्रियसखी शयनगृहान्नागता कथमागतैव ।
२ सखि कथय प्रथमसमागमवृत्तम् ।

जखन अधर रस कयलनि पाने ।
लाज चिकुर फुजि कयल पयाने ॥
कुचयुग परसि कयल हँसि कोरा ।
लाज लजाए पड़ाइलि मोरा ॥
सुमरि सुमरि सखि तसु व्यवहारे ।
गदगद स्वर पुलकित तनु भारे ॥
रसमय हर्षनाथकवि भाने ।
नृपलक्ष्मीश्वरसिंह रस जाने ॥१३॥

रामा—सहि बाणपुत्ति तुम्ह तादस्स घरे कलअलो सुणीअदि ता वअंपि गच्छम्ह । [इति निष्क्रान्ता[1]]

इति अनिरुद्धसमागमो नाम तृतीयोऽङ्कः ।

अथ चतुर्थोऽङ्कः

[ततः प्रविशति]

बाणासुरः—कः कोऽत्र भोः ।

[प्रविश्य] द्वारी । जअदु जअदु देओ एसोऽह्मि आणवेदु देओ[2] ।

बाणः—कथय मदन्तःपुरवृत्तम् ।

[द्वारी गीतेन कथयति]

१ सखि बाणपुत्रि तव तातस्य गृहे कलकलः श्रूयते तद्वयमपि तत्र गच्छामः ।

२ जयतु जयतु देवः एषोऽस्मि आज्ञापयतु देवः ।

नट रागे

कि करब नीच कथा परगास,
कहि न सकिअ किछु होअ तरास ।

नागर एक मनोभव वेश,
कयल कुमरि मन्दिर परवेश ।

भेलिह तनिक वश राजकुमारि,
एतबा अयलहुँ नयन निहारि ।

कि करिअ मन गुनि एकर विचार,
राजकुमरि भेलि कुलक अङ्गार ।

हर्षनाथ कवि भनदय गाव,
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझु भाव ॥१॥

बाणः—हा हतोऽस्मि महति कुले कलङ्को जातः (सवैक्लव्यम्) ।

लब्धा शुद्धकुलेजनिस्सुविहिता सेवामृडानीपते
र्निर्जित्यामरदैत्यदानवकुलं लब्धः प्रतापोऽधिकः ।
भ्रातृत्वं शरजन्मनोप्यधिगतन्तस्यापि मे मानुषा-
त्सञ्जातं कुलधर्षणङ्कथमहो चित्रा गतिः कर्म्मणाम् ॥१॥

अपि च

ललित रागे

कओन दुरितफल विहि भेल वंके,
एहन पवित्रकुल भेल कलंके।
कि करब आब कुलक अभिमाने,
से जनमलि जे कटलक काने।
सुर नर मुनिगण परिजन साथे,
कोन परि उपर करब हम माथे।
मनकर गरल करिअ हम पाने,
अगिनि, गमन करि तेजिय पराने।
हर्षनाथ कवि मनदय गावे,
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझु भावे ॥२॥

[पुनस्सक्रोधं करान् करैः प्रपीड्य]

वसन्त राग

सहसभुज मोर करि अनादर, कयल कुल अपमान ओ।
जेहन जेजन परमदुर्जन, हरब तनिक परान ओ।
दैत्य दानव यक्ष राक्षस, देवगण लय साथ ओ।
तनिक होथि सहाय जँओ, पुनु सभक कटाव माथ ओ।
हमर भुजडर असुर सुर नर, सभक कम्पित गात ओ।

के एहन जग माह जे जन, करथि नाहे प्रनिपात ओ।
करब आज अन्हार दहदिस, विशिख लय रण जाए ओ।
हर्षनाथ विचारि मन, गिरिजा चरण हिअ लाए ओ ॥३॥

[पुनः सक्रोधं] शृणु रे द्वारिन् सत्वरमद्ययाहि किंकरसैन्यसमुद्योगाय।

द्वारी—तथा[1] [इति निष्क्रान्तः]

नेपथ्ये—भोः भोः किङ्करादिगणाः सौधं वेष्टयित्वा सज्जीभवन्तु भवन्तः।

[पुनर्नेपथ्ये]—वेष्टितमस्माभिस्सर्व्वमन्तःपुरम्।

बाणः—कथमागतं किङ्करसैन्यम्।

[पुनर्नेपथ्ये] प्रहरन्तु प्रहरन्तु भवन्तः एष रतितस्करः परिघं भ्रामयंस्तिष्ठति।

बाणः—कथमुपक्रान्तमेव युद्धं तदहमपि तस्य दैवहतकस्य पराक्रमं गत्वा पश्यामि [इति निष्क्रान्तः]

[ततः प्रविशति परिघपाणिरनिरुद्धः] एषोऽहमसुरकुलं नाशयामि अद्यास्मद्विक्रमं पश्यन्तु लोकाः।

[नेपथ्ये] हा हदम्हि अज्जउत्तस्स का अवत्था हुविस्सदि[2]

१ तथा।
२ हा हताऽस्मि अधार्य्यपुत्रस्य का अवस्था भविष्यति।

अनि—कथमियमस्मत्प्रेयसी बाणसंग्रामसमुद्योगमाकर्ण्य भयविह्वला किमपि विलपन्ती इत एवाभिवर्त्तते। तद्यावदेनां समाश्वासयामीति, [तां प्रतीक्षमाणस्तिष्ठति]

[ततः प्रविशत्युषा] पुनर्हा[1] हदम्हि इत्यादि पठति।

अनि—प्रिये न भेतव्यम्।

दोहा

बाण सहित जत असुरगण, सभक करब हम नाश।
अचिर मिलब हम तोहि पुनु, सुन्दरि तेजह तरास ॥५॥

[इत्युषां समाश्वास्य सत्वरं युद्धाय निष्क्रान्तः]

उषा—कधं गदो अज्जउत्तो ता अहंपि देइं प्पसादेदुं गच्छेमि[2] [इति निष्क्रान्ता]

[ततः प्रविशति]

चित्रलेखा—कधंरणवुत्तंविजाणिदुं[3] पेसिदो चारो चिराअदि [पुनस्सर्व्वतोऽवलोक्य] अअंआअदोज्जेव[4]।

[ततः प्रविशति] चारः इयं चित्रलेखा तद्यावदुपसर्पामि [इत्युपसर्पति]

---

१ हा हताऽस्मि।
२ कथं गत आर्य्यपुत्रः तदहमपि देवीं प्रसादयितुं गच्छामि।
३ कथं रणवृत्तं विज्ञातुं प्रेषितश्चारश्चिरायते।
४ अयमागत एव।

चित्र—कधेहि कधेहि रणवुत्तम्[1]।

चारः—शृणु सर्व्वम्।

गीत लाउनि

रथ चढि बाण महासुर आयल लय चतुरङ्ग बल धीरे।
कर गहि परिघ असुर कुलमारल अनिरुध यादव वीरे।

चित्र—[सहर्षं] उज्जीविदह्मि तदो तदो[2]।

चारः—

काम तनय डर सकल पडायल जत छल रिपुदल वीरे।

चित्र—[सहर्षं] इणं पारिदोसिअं गेह्ण[3] [इत्यङ्गुरीयकन्ददाति] तदो तदो[4]।

चारः—

नयन निरखि कहू कुपित भेल पुनु बाण नृपतिरण धीरे।

चित्र—हा संशइद ह्मि तदो तदो[5]।

---

१ कथय कथय रणवृत्तम्।
२ उज्जीविताऽस्मि ततस्ततः।
३ इदं पारितोषिकं गृहाण।
४ ततस्ततः।
५ हा संशयिताऽस्मि ततस्ततः।

चारः—

जगभरि जनिक समान आन नहि रिपुकुल कम्पित जाही।
नागपाशलय दृढकय बाँधलक कयल अपन वश ताही।

चित्र—[सवैक्लव्यं] हा हद्धि तदो[1] तदो[2] ।

चारः—

कामतनुज तन कम्पन उपजत तेजन निय अभिमाने।
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥७॥

चित्र—तदो तदो[2] ।

चारः—ततश्चानिरुद्धं हन्तुमुद्यतं बाणासुरं जामाताऽयं न हन्तव्य इति कुम्भाण्डो निवर्त्तयामास ।

चित्र०—सुट्ठु किदं मन्तिराएण ता रणवुत्तं पिअसहीए णिवेदिदुं गमिस्सं तुमं पि पुणो तद्वुत्तं विजाणिदुं तत्थ अहिसर[3] ।

चारः—तथा [इति निष्क्रान्तौ] [विष्कम्भकः]

[ततः प्रविशति नागपाशबद्धोऽनिरुद्धः सर्पबन्धनबाधान्नाटयन्] (स्वगतं) किमिदानीमनुष्ठेयं कथं बन्धमोक्षो भविष्यति। (विमृष्य) भगवत्या दुर्गायाः प्रसादमन्तरेण

---

१ हा हताऽस्मि ततस्ततः।

२ ततस्ततः।

३ सुष्ठु कृतं मन्त्रिराजेन तद्रणवृत्तं प्रियसख्यै निवेदयितुं गच्छामि त्वमपि पुनस्तद्वृत्तं विज्ञातुं तत्राऽभिसर।

को वा प्रतीकारो भविष्यति तद्यावत्तामुपश्लोकयामि। साञ्जलिबन्धं [प्रकाशम्]

गीत सोरठ

जय जय महिषविनाशिनि भगवति सिंहगमनि जगदम्बे।
त्रिभुवनतारिणि विपदनिवारिणि सकल भुवन अवलम्बे।
त्रिदश तपोधन दनुज मनुज गण चिकुर निकर अभिरामे।
तुअ पद चिन्तन विमुख सतत मन किदहु होएत परिणामे।
हमर दुरित मति जानि सकल गति करिअ न अतिशय रोषे।
तनय रहित मति करय अनलगति कहिअ ककर थिक दोषे।
तुअ गुण निगम अगम हरिहर विधि कहि न सकथि अनुपामे।
अनेक जनम तप करथि जतन दय तुअ पद दरशन कामे।
क्षमिय हमर अपराध कृपामयि करिअ अभय वर दाने।
गिरिनन्दिनि पदपङ्कज मधुकर हर्षनाथ कवि भाने ॥८॥

[इति ताम्ध्यायति]

[ततः प्रविशति] भक्तिपरतन्त्रा दुर्गा—प्रसन्नाऽस्मि तत्राभीष्टमभ्यर्थय ।

अनि—नागबन्धनान्मुक्तिर्भवतु ।

दुर्गा—एवमस्तु तथापि कृष्णागमनपर्यन्तमबद्धेनाऽपि त्वया बद्धवद्भवितव्यं । [इति निष्क्रान्ता]

अनि——कथङ्कतैव जगदम्बा । (विमृष्य सहर्षं) विनष्टम्मम सर्प्पबन्धनदुःखं भगवत्याः प्रसादात् तदिदानीम्मयाऽपि तच्चरणकमलन्ध्यायता कृष्णागमनप्रतीक्षमाणेन कुत्रचिद्वर्त्तितव्यम् (इति निष्क्रान्तः)

इति अनिरुद्धबन्धमोचणो नाम चतुर्थोऽङ्कः ॥

अथ पञ्चमाङ्क

[ततः प्रविशति]

चिन्ताकुलकृष्णः— कथमनिरुद्धान्वेषणाय प्रेषितश्चाश्चिरायते । (पुनस्सर्व्वतो विलोक्य) अयमागत एव ।

[ततः प्रविशति] चारः जयति जयति देवः ।

कृष्णः— कथय कुत्रापि मिलितोऽनिरुद्धः ।

चारः—

गीत लावनी

जल थल कानन जत हम जानल जोहल कय परवेशे ।
तेजि सकल भय परम यतन दय कतहु न पायोल उदेशे ॥
पारिजात तरु हरिलय आनल तेँ सुरपति कँह रोषे ।
तेँ जनि कामतनय हरिलय गेल ई होअ तर्क विशेषे ॥

(अथवा)

हिनक निरखि तनु करब दोसर पुनु सुन्दर तनु निरमाने ।
ई जनि मन करि लय गेल बिह हरि ई होअ मन अनुमाने ।
जे किछु बुझि भेल से हम कहि देल अपनहि करु अनुध्याने ।
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥१॥

कृष्णः——मैवं वादी न देवताः क्षुद्रमतयो भवन्ति तत्पुनरेव गत्वाऽनिरुद्धमन्वेषय ।

चारः——यथाज्ञापयति देवः । [इति निष्क्रान्तः]

कृष्णः——[सवैक्लव्यं] यत्नेनान्वेषितोऽप्यनिरुद्धो न मिलति अन्तःपुरे च तद्विश्लेषप्रभवः कोलाहलो न निवर्त्तते । तत्किमत्र विधेयम् [विमृष्याकाशे सस्मरणं]नारदद्वारा सर्व्वमवगन्तव्यं स च सर्व्वत्रानुसरन् सर्व्वंजानाति [इति नारदं स्मरति]

[ततः प्रविशत्याकाशमार्गेण नारदः]

गीत दादरा

गगन गमन मुनि लेल परवेश ।
भाल तिलक शोभ धवलित केश ।
हाथ कमण्डलु दण्ड विराज ।
आवथि नारद हरिक समाज ।
चौदह भुवन फिरथि सब ठाम ।
अनुखन कलह देखन मन काम ।

बिनु मूल कलह करथि जे तूल ।
कतय चुकथि से लखि कइ मूल ।
हर्षनाथ कवि मनदय गाव ।
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझु भाव ॥२॥

कृष्णः—[प्रणमति]

नारदः—[शुभाशिषन्दत्वा] कथय कथय केन हेतुना स्मृतोऽस्मि ।

कृष्णः—केनापि हृतोऽनिरुद्धो न मिलति तत्कथय त्रिभुवनमटता भवता कुत्रापि दृष्टः ।

नारदः—बाणपुत्री प्रियचिकीर्षया शोणितपुरं चित्रलेखया नीतः । तत्र च बाणासुरेण सह सङ्गरं कृत्वा नागपाशेन बद्धस्तिष्ठति ।

कृष्णः—[ससम्भ्रमं] कथन्तत्र गन्तव्यम् ।

नारदः—बलभद्रप्रद्युम्नाभ्यां सह गरुडमारुह्य सत्वरङ्गन्तव्यम् । अहमप्याकाशमार्गेण गत्वा सङ्गरमालोकयन् चिरेण चक्षुषी शीतलयिष्यामि ।

कृष्णः—तथेति [गरुडं स्मरति]

[ततः प्रविशति पक्षवातकम्पिताखिलचराचरो गरुडः]

जयति जयति देवः किमर्थं स्मृतोऽस्मि ।

कृष्णः—[सादरं] आतानिरुद्धमोक्षणाय शोणितपुरं गन्तव्यम् ।

गरुडः—तथा [इत्युत्कण्ठान्नाटयति]

कृष्णः—कथञ्चिरेणाऽऽहूतौ बलभद्रप्रद्युम्नौ नागतौ । [पुनर्निरूप्य] एतावागतावेव ।

[ततः प्रविशति बलभद्रः प्रद्युम्नश्च]

कृष्णः—[दृष्ट्वा ससंभ्रमंबलभद्रप्रद्युम्नौ प्रति] अनिरुद्धमोक्षणाय सर्व्वैरस्माभिः शोणितपुरं गन्तव्यम् ॥

बलभद्रप्रद्युम्नौ—एवमस्तु [इति निष्क्रान्ताः]

[ततः प्रविशति] बाणासुरः—कथञ्चिरेणाऽऽहूतो ज्वरो नेदानीमप्यागतः । [पुनर्निरूप्य] अयमागत एव ।

[ततः प्रविशति ज्वरः]

गीत मालव

अति उनमत्त भयङ्कर वेश,
रोगराज ज्वर देल परवेश ।
तीनि चरण तिनि मुख विकराल,
नवलोचन कओ बाहुविशाल ।
नयन निमीलित आलस पाए,
हाथ भसम अनुछन हकिआए ।
चौदिश झुकि झुकि करय पयान,
जाहि परसय ताहि हरए परान ॥३॥

ज्वरः---जयति जयति देवः । कथय किमर्थमाहूतोऽस्मि ।

बाणः---बलभद्रप्रद्युम्नाभ्यां सह यदुप्रवीरः कृष्णोऽस्माभियोंद्धुं समागतः । तदद्य भवता सर्व्वतस्सेनाव्यूहं विधाय रणभूमौ सावधानेन भवितव्यम् ।

ज्वरः---यथाऽऽज्ञापयति देवः [इति निष्क्रान्तः]

बाणः---[सर्व्वतो विलोक्य] कथं गत एव रोगराजः । तदस्माभिरपि रथमास्थाय रणभूमौ गन्तव्यम् [इति निष्क्रान्तः]

[ततः प्रविशति] चित्रलेखा—बाणनिग्गहणिमित्तं सिरीइन्हो अआदो ता इणं वुत्तं सहीए पिअअणे णिवेदिदुं गच्छेमि[1] [इति गमनमभिनयति] ।

[ततः प्रविशति] अनिरुद्धः---कथमियं चित्रलेखा । चित्रलेखे कथय शोणितपुरवृत्तान्तम् ।

चित्र---सिरीकन्हो आअदो दीसदि[2] ।

अनि---तर्हि निगृहीत एव बाणः ।

चित्र । सब्वंसम्भावीअदि[3] ।

[नेपथ्ये गीयते]

१ बाणनिग्रहनिमित्तं श्रीकृष्ण आगतस्तदिदं वृत्तं सख्याः प्रियजने निवेदितुं गच्छामि ।

२ श्रीकृष्ण आगतो दृश्यते ।

३ सर्व्वं सम्भाव्यते ।

गीत झंझौटी

गरुड़ चढ़ि बलदेव सँगलय कामदेवक साथ ओ ।
चक्र कर गहि धाए पहुँचल, शोणित पुर यदुनाथ ओ ॥
भेल सङ्गर अति भयङ्कर, बाण किङ्कर सङ्ग ओ ।
हनल रिपुदल समर अतिबल, कयल ज्वर तनुभङ्ग ओ ।
रोगराज विलाप सुनि हरि, कयल तसु जिवदान ओ ।
कहल बहुविधभाग तनु करि, फिरह सकल जहान ओ ।
कुपित रथ चढ़ि बाण पहुँचल, घोर सङ्गर भेल ओ ।
कृष्णबाणक बाहु काटल छाड़ि, दुइ भुज देल ओ ॥
बाण हरषित भेल पुनु, त्रिपुरारि सों वर पाए ओ ।
हर्षनाथ विचारि मन, गिरिजाचरण मन लाए ओ ॥४॥

अनि—[सहर्षं स्वगतं] नूनमयमस्मत्पितामहविजयो बन्दिजनैर्गीयते । [प्रकाशं] चित्रलेखे श्रुतम्भवत्या

चित्र—भद्दं सुदं[1] ।

(पुनर्नेपथ्ये) इत इतो भवन्तः ।

चित्र—कथं णारअ णिद्दिट्ठ मग्गो बलहद्द-

१ भद्रं श्रुतम् ।

पज्जुम्मेहिं सह सिरीकन्हो इदोज्जेव्व अहि वट्टदि ता अहंपि तस्स दंसणेण अज्ज लोअणाइ शीदलइस्सं[1] ।

अनि—एवमेवं ।

[ततः प्रविशति बलभद्रप्रद्युम्नाभ्यां सह गरुड़ारूढ़ः श्रीकृष्णो नारदश्च]

नारदः—एष नागपाशबद्धोऽनिरुद्धस्तिष्ठति तदेनम्मोचयतु गरुडो नागपाशात् ।

गरुडः—[तथेत्युपसर्प्पति नागाः पलायन्ते]

अनि—एषोऽनिरुद्धोऽहं भवतः प्रणमामि ।

बलभद्रः—सर्व्वदा कल्याणमाप्नुहि ।

कृष्णः—क्व पुनरस्माकं स्नुषा बाणपुत्री चित्रलेखे प्रवेशय ताम् ।

चित्र—तहा[2] । (इति निष्क्रम्य तया सह प्रविशति)

चित्र—एसा अह्माणं पिअसही बाणपुत्ती तुस्से पणमइ[3] ।

बलभद्रः—सौभाग्यपात्री भूयात् ।

कृष्णः—देवर्षे नारद किमतःपरं विधेयम् ।

---

१ कथं नारदनिर्दिष्टमार्ग्गैः बलभद्रप्रद्युम्नाभ्यां सह श्रीकृष्ण इत एवाभिवर्त्तते तदहमपि तस्य दर्शनेनाद्य लोचने शीतलयिष्यामि ।

२ तथा ।

३ एषाऽस्माकं प्रियसखी बाणपुत्री युष्मान् प्रणमति ।

नारदः—देव स्वजनसमाश्वासनाय बाणपुत्र्यनिरुद्धाभ्यां सह झटिति द्वारवती गन्तव्या ।

कृष्णः—एवमस्तु । [इति सर्व्वे गमनमभिनयन्ति]

नारदः—कथं कृतकार्य्यैर्युष्माभिः क्षणमात्रेण द्वारवती प्राप्ता ।

कृष्णः—सर्व्वम्भवतः प्रसादात् ।

[ततः प्रविशति पुरस्त्रीभिस्सह रुक्मिणी]

[सहर्षं कृष्णम्प्रति] अज्ज सम्पण्णमणोरहा अहं वहुए बाणपुत्तीए दंसणेण[1] ।

कृष्णः—एवमेवं तदनया सममनिरुद्धं नीराजयतु भवती ।

रुक्मिणी—तधा[2] । [इति नीराजयति]

गीत चुमाओन आरती

पुरब जनम तप समुचित आज सुमङ्गल भेल ।
लय नागरि यदु बालक हरषित दरशन देल ।
आनन्द भरल नगर भरि भूषण वसन समारि ।
यदुपति भवन गमन करि कर कौतुक नर नारि ।

---

१. अद्य सम्पूर्णमनोरथा अहं वध्वा बाणपुत्र्या दर्शनेन ।

२. तथा ।

कनक कलस पुरहर करि मणिमय दीप बराए।
दूबि अच्छत कर लय कहुँ चानन भवन निपाए।
नगर नारि यदु बालक नागरि सहित चुमाव।
हर्षनाथ भन मनदय मिथिलापति शुभभाव ॥५॥

नारदः—[कृष्णम्प्रति] किन्ते भूयः प्रियमुपकरोमि।

कृष्णः—अतःपरमपि प्रियमस्ति। तथापीदमस्तु—

राजानः परिपालयन्तु वसुधान्धर्म्मेण सर्व्वे जना-
स्स्वीयङ्कर्म्म समाचरन्तु समये वर्षन्तु धाराधराः।
एतद्वृत्तनिबद्धनाटकरसास्वादानुरक्ताश्चिरं
भूयासुर्निरुपद्रवास्सहृदया भूरस्तु शस्यान्विता ॥१॥

नारदः—एवमस्तु।

[इति निष्क्रान्तास्सर्व्वे]

इति द्वारवतीप्रत्यागमनो नाम पञ्चमोऽङ्कः।

इति श्रीहर्षनाथकविविरचितमुषाहरणनाम

[नाटकम्परिपूर्णम्।]

[यवनिकापतनम्।]

माधवानन्दनाटकम्

अथ प्रथमोऽङ्कः

(गीति)

जय जगजननी जय जगजननी देहु सुमति मृगपतिगमनी।
सरसिरुहासन विपदविनाशनकारिणि मधुकैटभदमनी ॥
दितिसुतरञ्जन सुरगणगञ्जन महिपमहासुरबलदलनी।
त्रिभुवनतारिणि महिषविदारिणि धूम्रनयनभसमकरनी ॥
चण्डमुण्डशिरखण्डनकारिणि उनमतरक्तबीजशमनी।
अतिबलशुम्भनिशुम्भविनाशिनि निजजनसकलविपदहरनी ॥
तुअ गुण निगम अगम चतुरानन कहि न सकत कत सहस्रफणी।
अमरनिशाचरदनुजमनुजशिरचिकुरकलितजितरकतमनी ॥
तुअपदयुगलसरोरुह मधुकर हर्षनाथ कवि सरस भनी ॥१॥

अपि च।

या देवी कुमुदेन्दुकान्तिरुचिरा शुभ्राम्बरा शोभना,
चन्द्रार्द्धाङ्कितमस्तकेन्दुवदना हंसाधिरूढा करैः।
वीणामक्षगुणं सुधाढ्यकलशं विद्यां दधानादराद्
भक्तानन्दकरी सदा वितरतु श्रेयांसि सा शारदा ॥२॥

(नान्द्यन्ते)

सूत्रधारः—अलमतिविस्तरेण । एषा खलु खण्डवला-कुलकमलदिवाकरस्य महाराजरुद्रसिंहात्मजनेत्रेश्वरसिंहतनूजन्मनः श्रीश्रीमदेकरदेश्वरसिंहदेवस्य गुणिजनोपासिता परिषत् कस्याप्यभिनवरूपकस्य प्रयोगावलोकनाय समुत्कण्ठितेव लक्ष्यते । तत्कतमेन रूपकेणात्रोपस्थातव्यं येनैतस्याः प्रसादपात्रतां गमिष्यामीति नाध्यवस्यामि । (पुनः स्मृतिमभिनीय) अस्ति किलास्मासु सकराढीकुलनन्दनेन कविपण्डितकुलतिलकेन श्रीहर्षनाथशर्मणा विरचय्य समर्पितं माधवानन्दं नाम नवीनं नाटकम् । यत्र खलु

रासक्रीडा प्रेमगर्वमानानुशयविस्तरः ।
वर्णितोऽनुनयः पश्चात्काननक्रीडनं तथा ॥३॥

तदभिनयेनैषा रञ्जनीया । तत्साहाय्यनिमित्तं गृहिणीमाह्वयामि तावत् ।

(परिक्रम्य नेपथ्याभिमुखम् ।)

प्रिये ! इहागम्यताम् ।

(प्रविश्य)

नटी—एसाम्हि[1] आणवेदु अज्जउत्तो ।

सूत्र—प्रिये ! पश्य रमणीयतां शरत्समयस्य । इह हि

१ एषाऽस्मि आज्ञापयतु आर्यपुत्रः ।

निर्मेघमम्बरतलं विमलाः सरस्य-
श्चञ्चन्मृगाङ्ककरचुम्बितदिङ्मुखानि ।
सम्फुल्लकैरववनीषु मनोहरासु
गुञ्जन्ति मञ्जु मधुपानरता मिलिन्दाः ॥४॥

तदेतन्निशामधिकृत्य सङ्गीतकमनुष्ठीयताम् ।

नटी—जहा[1] आणवेदि अज्जउत्तो (इति गायति)

सुन्दरशरदसमय सुखधामे !

सजलजलद गेल विमल गगन भेल शशिमण्डल अभिरामे ॥
तेजि ककुभकामिनि निज दिनमणि अस्तशिखर चल गेला ।
निरखि सुनवर जनि रजनीकर उपपति उपगत भेला ॥
सफल नयनरुचिचोरतिमिर जनि हिमकर दीप तरासे ।
सघन विटपिदलविषम महीतल गिरिकन्दर कर बासे ॥
रविकरकलितवलितकमलिनि तँह कुमुदपराजित भेला ।
दिनकरविरह निरखि निशि कुमुदिनि तसु सम्पति हरिलेला ॥
रजनिमलिन नलिनी तेजि मधुकर कुमुदिनि अनुगत होई ।
सम्पद सकल चराचर अनुचर आपद बन्धु न कोई ॥
निर्मल सरित शरदसमयोचित कमिच पुलिन दरशावे ।
लाज अधीन नवीन युवति जनि लघु लघु जघन देखावे ॥

१ यथाऽऽज्ञापयति आर्यपुत्रः ।

मलय पवन वह चित नहि थिर रह परिहर मानिनि माने ।
एकरदेश्वर सिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥५॥

सूत्र—प्रिये ! रमणीयं खलु गीतम् ।

(नेपथ्ये)

(दोहा)

बन्धुजीव नवमल्लिका केतकि कुमुदिनि कुन्द ।
चन्द्रकला[1] मधुपान करि गुञ्जन मत्तमिलिन्द ॥६॥

सूत्र—(आकर्ण्य) इयं खलु व्रजकामिनीभिस्सह रासक्रीडाप्रसक्तस्य मुरलीं वादयतः श्रीकृष्णस्य प्रावेशिकी दोहा गीयते । तदेहि आवामप्यनन्तरकरणीयाय सज्जीभवावः । (इति निष्क्रान्तौ) ।

इति प्रस्तावना

(ततः प्रविशति यथानिर्दिष्टः श्रीकृष्णो व्रजकामिन्यश्च)

(गीत)

आनन्द नन्दकिशोर आज व्रज रास रचो ।
केतकि कुन्द कुमुद परिमल लय मलय पवन बह धीर ॥
पूरनचन्द्र किरण चकमक कर विकसित कुञ्जकुटीर ॥

१ वक्ष्यमाणचन्द्रावलीकृष्णसङ्गमसूचकत्वादेतत् पताकास्थानकम् 'प्रस्तुतागन्तुभावस्य वस्तुनोऽन्योक्तिसूचनं पताकास्थानकम्' इति दशरूपोक्तलक्षणात् ।

अलक विरचि सिर सिन्दुर लोचन कज्जल उरविच हार ।
घरघर से निकसलि व्रजवनिता नूपुर कर झनकार ॥
पिककूजित अलिगुञ्जित भूषणसिञ्जित चौदिश पूर ।
गावय गीत मधुर धुनि सखिगण जनमताप कर दूर ॥
वंशी अधर मुकुट शिर कछनी कटि तनु ललित त्रिभङ्ग ।
नटवर भेष किये यदुनन्दन विहरत राधा सङ्ग ॥
जप तप नियम करत कत मुनिजन जेहि पद दरशन काज ।
हर्षनाथ भन तसु गोपीजन सहज दरश कर आज ॥७॥

राधा—[सर्वतो विलोक्य । संस्कृतमाश्रित्य] कथम् प्रभातप्राया रजनी । इह हि—

दृष्ट्वा रासमहोत्सवं निशि शशी ताराभिरत्यादरा-
न्नूनं जागरणेन सम्प्रति दृढं खिन्नः परिम्लायति ।
एषा कैरविणी शुभाऽनुहरते म्लानिं सुधांशोस्सती
दृष्ट्वा म्लानमरिव्रजं सरसिजव्रातस्समुज्जृम्भते ॥८॥

श्रीकृष्णः— अहम् पुनरेवमुत्प्रेक्षे ।

कान्ते त्वन्मुखमण्डलेन विजितः क्षीणाभिमानश्शशी
नूनम्मज्जति वारिधावनुगतिं कुर्वन्ति तस्य प्रियाः ।
तारास्सर्व्वमिदं विलोक्य कुमुदैस्तद्बन्धुभि खिद्यते
दृष्ट्वा वैरिविपत्तिमम्बुजकुलं हृष्टं समुज्जृम्भते ॥९॥

भवतु, सम्प्रति प्रातस्समयोचितकर्मानुष्ठानाय सर्वैरेवास्माभिर्गन्तव्यम् ॥

व्रजकामिन्यः—तहा[1] (इति निष्क्रान्तास्सर्व्वे)

इति प्रथमोऽङ्कः

अथ द्वितीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णप्रेमगर्विता राधा ललिता च)

राधा—

(गीति)

कि कहब अपन सोहागे, व्रजनन्दन वर पाओल भागे ।
पुरुब पुजल हरवामा, से मोर पुरल सकल मनकामा ।
सकल कलापरवीना, रहथि सदा पहु मोर अधीना ।
पलक न छाड़थि सङ्गे, कबहु करथि नहि मोर मनभङ्गे ।
प्रेम विनति कत बेरी, काइत ठाढ रहथि मुख हेरी ।
हर्षनाथ कवि भाने, एकरदेश्वरसिंह रस जाने ॥१॥

(दोहा)

करथि यशोदानन्द मम प्राणअधिक सम्मान ।
मम सहचरि गोपालि जन दासीजन सम जान ॥२॥

ललिता—

[1] तथा ।

(दोहा)

अचरज लागय मोहि सखि वृथा गरव तुअ देखि ।
वचनप्रीति हरि तोहि कर परजन प्रेम विशेखि ॥३॥
रास समय चन्द्रावली लोचन भाव जनाय ।
तुअ छल करि सखि धाम तसु गमन कयल यदुराय ॥४॥

(गीति)

सखि हे अपरुप माधव रीति ।
वचन अधिक तुअ प्रीति जनावथि अन्तर आनक प्रीति ॥
आज रभसरस गेलहु काजवश तुअ प्रियसहचरि गेह ।
देखल नयन भरि सुनह यतन धरि हरिचन्द्रावलि नेह ॥
तुअ छल करि हरि गेलाह कोनहु परि साँझ समय तसु धाम ।
चरण पखारि नारि अङ्कभरि शयन वैसाओल स्याम ॥
दुओओ दुहुक गुन गान करय पुन मगन परस्पर प्रेम ।
कामुक कामिनि परममुदित जनि निर्द्धन पाओल हेम ॥
अबहु बुझिअ धनि कपट प्रेम हुनि करिअ हृदय अवधान ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथकवि भान ॥५॥

अपि च

सुन्दर शरद समय भल सजनी चकमक चाननि राति ।
रचल सुरत नव कामिनि सजनी मदन मनोरथ माति ॥
अधर सुधारस पीउल सजनी कपट सुतल पहु हेरि ।
बिहसि उठल पहु से देखि सजनी लाज वदन लेल फेरि ॥

निज कर वसन दूर करि सजनी अभरन सकल उतारि।
कुचयुग परसि विहुसि पहु सजनी पिउल अधर अवधारि॥
निज कर गहि अङ्कमभरि सजनी शयन सोआओल नाह।
यामिनि जलद नेहवश सजनी करय देह एक चाह॥
नखक्षतभरल पयोधर सजनी निरखि एहन होअ भान।
कनकलता पर गिरियुग सजनी ततय उगल दशचान॥
हर्षनाथ कविशेखर सजनी रसमय मनदय भान।
एकरदेश्वरसिंह रस सजनी भावक सरस सुजान॥६॥

अपि च

तरुणवयस मदमातलि सजनी मगन मदन वश नारि।
रचल रसिकसङ्ग मन दय सजनी रति विपरीत विचारि॥
ललित युगल कुच ऊपर सजनी तनु लतिका सञ्चार।
मेरु युगल लय थिर भय सजनी दामिनि रचल विहार॥
नाह वदन चञ्चल चुमि सजनी पिउल अधर अतिमन्द।
जनि पङ्कज वञ्चन नरि सजनी बन्धुजीव पिव चन्द॥
फूजलचिकुरकलित मुख सजनी स्वेदबिन्दु लस ताहि।
पूजल मोतिनिकर जनि सजनी जलधर शशि अवगाहि॥
सुरत समापि लाजवश सजनी हसलि नाहमुख हेरि।
जनि कुचभरखेदित पहु सजनी सिंचति सुधारस ढेरि।
हर्षनाथ कविशेखर सजनी रसमय मन दय भान।
एकरदेश्वरसिंह रस सजनी भावक सरस सुजान॥

राधा—(सखेदम्) सहि[१] सच्चं एदं। मएवि रासोसरे तस्स तारिसो लोअणव्वावारो दिट्ठो। ता सव्वं सम्भावी। अइ अदोवरं मालदीवाडिअं गदुअ जहा तहा अप्पाणं विणोएणेमि। (इति निष्क्रान्ते।)

इति द्वितीयोऽङ्कः

अथ तृतीयोऽङ्कः

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—अद्य श्रुतम्मया यत्किल ललितामुखाच्चन्द्रावलीभवनगमनवृत्तान्तं श्रुत्वा प्रकुपिता मत्प्राणाधिका राधिका परित्यक्तसकलालङ्कारा मालतीवाटिकायां तिष्ठति। तदचिरमेवैनामुपसृत्य प्रसादयिष्यामि। (सर्वतः परिक्रम्य) इयम् मालतीवाटिका तदत्र प्रविश्य लतान्तरितो भूत्वा तस्या रहस्यसम्भाषणं शृणोमि (इति तथा करोति)।

(ततः प्रविशति सख्या ललितया सह यथानिर्दिष्टा राधा)

१ सखि सत्यम्। मयाऽपि रासावसरे तस्य तादृशो लोचनव्यापारो दृष्टः। तत् सर्वं सम्भाव्यते। अपि अतःपरम् मालतीवाटिकां गत्वा आत्मानं विनोदयामि॥

राधा—

(गीति)

सखि हे बुझल हरिक अनुरागे ।
मधुमयवचनभरम हम पड़लहुँ कि कहब अपन अभागे ॥
सुरतरुबीज उसर हम फेकल रोदन निर्ज्जन गेहा ।
बधिरकान मृदुगान कयल जनि कयल गोपशिशुनेहा ॥
सज्जनदाप तापरजनीकर वायसशुचिता रीति ।
फणिकुलसहन तपनकर शीतल दुर्ज्जन होअ न प्रीति ॥
दुर्ज्जननेह रेह सौदामिनि सैकतसेतुसमाने ।
कोटिजतनकरु तइओ न थिररहु ई जग के नहि जाने ॥
सपनहु कबहु पलहु नहि मानब हुनक बचन परमाने ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥१॥

ललिता—सहि¹ युत्तं खु इदं ।

श्रीकृष्णः—(श्रुत्वा स्वागतम्) सत्यमियं कोपवशंगता प्रेयसी । तदेनां यथातथा प्रसादयामि (इत्युपसृत्य) । कुशलम्भवत्याः ?

राधा—(मौनमवलम्ब्याधोमुखी तिष्ठति)

श्रीकृष्णः—केयमपूर्वा रीतिः (इत्युक्त्वा राधाङ्करे गृह्णाति)

१ सखि युक्तं खल्विदम् ।

राधा—(करमाच्छिद्य परावर्त्य मुखं तिष्ठति)

श्रीकृष्णः—

(गीति)

पिशुनवचन सुनि रोष करह धनि की मोर भेल अपराधे ।
तुअ विपरीत मनहुँ नहि चिन्तल प्रेम करह किए बाधे ॥

मानिनि—

मलयसमीर बहय पिक कुहकय पसरय कुसुमसुवासे ।
चकमक चाननि रसमय यामिनि ततय मान उपहासे ॥
यत अछि जगत विदित बनितागुण तुअ तनु सकल निवासे ।
समुचित सदय हृदय करि सुन्दरि पूरिअ याचक आसे ॥
सुन्दरि नयन निहारि दूर करु लोचननयनमिखाते ।
जओ पुन कण्टक लागु चरणमह कण्टकतह होअ काते ॥
करिअ विनति कलजोड़ि मानवति परिहरु असमयमाने ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥२॥

अपि च

सुन्दरि अयलहुँ तुअगुण जानि ।
न करिअ गुनमति प्रेमकहानि ॥
सकलशरीर कुसुमसन तोर ।
ताहि उचित नहि हृदय कठोर ॥

विनकारण तुअ उपजय रोष ।
हमकि कहब मोर करमक दोष ॥
न करिअ सुन्दरि वदन मलान ।
हेरइत होअ मोर विकलपरान ॥
भाषिय सरस वचन करि हास ।
अनुगतजन धनि न करु निरास ॥
रसमय हर्षनाथ कवि भान ।
एकरदेश्वरसिंह रस जान ॥३॥

राधा—(तथैव विमुखी तिष्ठति)

श्रीकृष्णः—

रुष्टा पश्यसि मामृते प्रियतमे किङ्कङ्कणाभ्यां करौ
ताम्बूलेन रदच्छदावथ कुचौ हारेण हीनौ पुनः ।
पादौ नूपुरवैभवेन कुरुषे चित्रं नु ते चेष्टितं
कः कुर्यात्परसम्पदोऽपहरणं मुग्धे परस्मिन् रुषा ॥१॥

अपि च—

रमनि हे सुनिअ वचन दय कान
जँओ मोर मानिअ दोष रोपकरि करु धनि दण्डविधान ॥
कुलिशसमानवान करि लोचन दिढ करि भौँह कमान ।
करि समधान अचानक वेधिअ न करिअ वदन मलान ॥

दिढतर पीन पयोधर गिरिवर युगल साधि रतिरङ्ग ।
बाहुपाश लय दिढ कय बान्हिअ न करु वृथा मनभङ्ग ॥
तुअ यदि रुचित विरोध कमलमुखि होअओ करिअ जनु देरि ।
चुम्बन सरसविलोकन भाषण देहु पुरुबकृत फेरि ॥
रसमय शरद समय सुखयामिनि ततय उचित नहि मान ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भान ॥४॥

अपि च—

रमनि हे परल कौन मोर दोष
किए नहि नयन हेरिअ नहि भाषिअ किए मन उपजल रोष ॥
तुअ रुचिविजित निरखि निजकामिनि तुअ अनुचर मोहि जानि ।
कुपित मदन शर हनय सुदिढ कर श्रवणअवधि धनु तानि ॥
रसमय शयन सरस नव कानन सरस शरद निशि मोहि ।
लगइछ सकल विरस अति हेरइत अधर सुखाएल तोहि ॥
मोर अपराध अधर निज सुन्दरि कोप उपसतम श्वास ।
परसि तपाविअ समुचित मानिअ अपरुब कोप प्रकाश ॥
नयन निहारि वचन एक भाषिअ करिअ अधर रस दान ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भान ॥६॥

अपि च—

कुमुदिनि करु निज वदन विकास ।
तुअ गुणनिकरनियन्त्रित मधुकर अनुसर न करु निरास ॥

दिवस विगत भेल रजनि उदय देल गगन निशाकर राज।
उगि गेल उडुगन तइओ न परसन तुअ मुख मूनल आज ॥
परिहरि बेलि चमेलि विषमदल केतकि कुन्दमरन्द।
तुअ गुण गावय चौदिश धावय कतहु न रमय मिलिन्द ॥
सुन्दर रूप मरन्द मनोहर जगभरि विदित सुवास।
करिअ सफल धनि बुझिअ हृदय गुनि पूरिअ मधुकरआस ॥
परसनि भय मुख मोन तेआगिअ करु गुनमति रस दान।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भान ॥७॥

राधा—युत्तं[1] तुज्झ महुअरत्तणं जदो महुलोहेण यत्थ तत्थ भमसि। ण पुणो मे कुमुइणित्तणं जदो ण मं महुअरो अणुसरइ ॥ (पुनस्सकोपं नेत्रे उन्मील्य)

(गीति)

माधव बूझल तोहर सिनेहे।
जाहि रमनिसङ्ग रइनि गमाओल जाहु अचिर तसुगेहे ॥
मधुमय वचन सुनत के माधव छाडिदेहु गुणगाने।
सुनिसुनि कपट चरित तुअ सुविदित भरल दुओ मोरकाने ॥
श्रमजलभरल सकल तन लोचन जागररञ्जित शोभे।
सुखमय शयन सदन तसु चाहय जे तुअ मानस लोभे ॥

१ युक्तं तव मधुकरत्वम् यतो मधुलोभेन यत्र तत्र भ्रमसि। न पुनर्मे कुमुदिनीत्वम्, यतो न मां मधुकरोऽनुसरति।

मरङ्ग तुअ अङ्ग लपटि निज भूषण झापल रामा।
तुअ तनु आज निरखि अवधारल तसु भूषण अभिरामा ॥
करिअ कृपा निज भवन गमन करु तुअ दरशन नहि भावे।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि गावे ॥८॥

(इत्युत्थाय सख्या सह निष्क्रान्ता।)

श्रीकृष्णः—(सवैक्लव्यम्) कथङ्गतैव प्रकुपिता प्रियतमा। तत्किमत्रानुष्ठेयम्? कथं वा धृतिं धारयामि? को वा लोकोत्तररमणीयां तां विस्मर्तुं पारयति? अहो शरीरसौन्दर्य्यम्! तथाहि—

(गीति)

कि कहब अपरुब नागरिरूपे।
नीलवसनि धनि जलदचलित जनि थिररहु तडितसरूपे ॥
राजित वदन मनोहर तापर कुन्तल कुटिल विराजे।
राहुदशन डर तिमिर नुकाएल जनि रजनीकरराजे ॥
चलल्लि रोमावलि भुजगि नाभिबिल लोचन खञ्जन त्रासे।
कुचकञ्चनगिरिनिकट नुकाइलि नासागरुड तरासे ॥
नूपुर पद्मरागपदशिञ्जित ललितनटनश्रुतिकञ्जे।
नयनभेद कइ पुलक अङ्गमद कलक विशेषक पुञ्जे ॥
तसु तनु रचल मदन जनि रसमय की रसलम्पट चाने।
जपतपनिरत सतत रसवञ्चित की विह रचत अजाने ॥

सुन्दर अधर मधुरिमद गुञ्जय कटि केहरि अभिमाने ।
एकरदेश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥९॥

भवतु, कर्त्तव्योऽत्रानुनययत्नविशेषः (इति निष्क्रान्तः) ।

इति तृतीयोऽङ्कः

अथ चतुर्थोऽङ्कः

(ततः प्रविशति ससम्भ्रमा विशाखा)

विशाखा—अज्ज[1] क्खु सिरीकन्हेण कलम्बतलम्मि आहूदाम्हि । एसो कलम्बरुक्खो । ता एत्थ सिरीकन्हो हुविस्सदि । ता एत्थ पविशामि (इति प्रवेशमभिनयति)

(ततः प्रविशति चिन्तानिमग्नः श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—(दृष्ट्वा सहर्षमाशिषो दत्वा) प्रियसखि विशाखे ! अद्यातीव कोपकलुषितमानसा भवत्याः प्रियसखी मामनादृत्य कदलीवाटिकां प्रस्थिता । तदत्रावलोकय विधेयम् ।

१ अद्य खलु श्रीकृष्णेन कदम्बतलमाहूताऽस्मि । एष कदम्बवृक्षः । तदत्र श्रीकृष्णो भविष्यति । तस्मादत्र प्रविशामि ।

अपि च—

कि करब आज यतन हम रे तेजि गेलि व्रजरामा ।
सुखद नेह भेल तनि बिनु रे दुखमय परिनामा ॥
केतकि कुन्दकुमुदरस रे परिमल लय धीरे ।
वहय मन्द मलयानिल रे मोर दहय शरीरे ॥
अलिकुल गान कान दह रे शशिकर तनुतापे ।
चन्दनपरस सुमरि पुन रे मानस मोर कापे ॥
जेहि विधि होअ समागम रे तसु करिअ उपाई ।
करिअ यतन सखि मानिनि रे मोहि देहु मनाई ॥
हर्षनाथ कविशेखर रे रसमय इहो भाने ।
एकरदेश्वरसिंह रस रे बुझ गुणक निधाने ॥१॥

विशाखा—जहामइवैहवं[1] उवाअं करिस्सं ।

श्रीकृष्णः—तावदहं भाण्डीरनिकटं गच्छामि (इति निष्क्रान्तः ।)

विशाखा—(परिक्रम्य) इअं[2] कअलीवाडिआ एत्थ पिअसही हुविस्सदि । ता एत्थ पविशामि (इति प्रवेशमभिनयति) ।

१ यथामतिवैभवम् उपायं करिष्यामि ।
२ इयं कदलीवाटिका । अत्र प्रियसखी भविष्यति । तदत्र प्रविशामि ।

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णावधीरणानुतप्ता सख्या ललितया सह राधा)

राधा—सहि[1] कअवहुविणओ वि सरीकन्हो मए ओहीरिदो त्ति अहो पमादो ! किं एत्थ करणिज्जं। कहं पुणो वि समागमो हुविस्सदि (इत्यनुतापं करोति)।

विशाखा—इयं[2] पिअसही किम्पि मन्तेदि ता लदान्तरिआ भविअ इमाए रहस्समन्तणं सुणामि ॥

(इति तथा करोति)

राधा—सखि हे यतन दय करु मोर काजे।
कोनपरि आज देखब ब्रजराजे ॥
पीत वसन तनु घन अभिरामे।
लसय कनक जनि शालगरामे ॥
सुन्दर वदन नयन अभिरामे।
खेलय खञ्जन पङ्कजधामे ॥
कनक मुकुट शिखिपुच्छ विराजे।
जनि कञ्चनगिरि सुरधुनु राजे ॥

१ सखि कृतबहुविनयोऽपि श्रीकृष्णो मयाऽवधीरित इत्यहो प्रमादः ! किमत्र करणीयम् ? कथं पुनरपि समागमो भविष्यति ?

२ इयं प्रियसखी किमपि मन्त्रयते [illegible] भूत्वाऽस्या रहस्यमन्त्रणं [illegible]

राजित कर बिच मुरलि विशाला।
लसय कमल जनि पंकजनाला ॥
रसमय हर्षनाथ कवि गावे।
एकरदेश्वरसिंह बुझ भावे ॥२॥

अपि च—

सुनु सखि ओरे कओन दुरितफल दुरमति यदुपति,
कयल अनादर निजमति ॥
तनि मोहि ओरे एक प्राण छल दुइ तन, सब खन,
कयल भेद हम निज मन ॥
विधिवश ओरे यदि न मिलत मुरलीधर, यदुवर,
हतब जीव कहि गिरिधर ॥
उपचरु ओरे मोर अवगुन सहु बिसरथि, आवथि,
दिन दिन नेह बढावथि।
रस बुझु ओरे रसभावक जन मन दय, गुणमय,
हर्षनाथ भन रसमय ॥३॥

(इति शिरसि हस्तं निधाय विरहवेदनामभिनयति)

ललिता—सहि[1] समस्ससिहि।

राधा—(सखेदं)

१ [illegible]

एकसरि कौन परि खेपब सरस शरदऋतु आज ।
मदनदहन दह मोर तनु कि करब पहु न समाज ॥
पीबि कुसुमरस हर्षित गुञ्जत अलि दह कान ।
सजल नलिनिदल चानन मोर तनु अनल समान ॥
दहओ जानि मोहि एकसरि सौतिसहोदर चान ।
जगतप्राण नहि समुचित तोहि मोर हरह परान ॥
मनसिज मोर मन तापय कि कहब परजन दोष ।
केओओ न तसु हित जगभरि जाहि करय बिह रोष ॥
बुझत पराभव के मोर के मोहि होएत सहाए ।
सकल जगत मोहि विपरित कतहु न जिवनउपाए ॥
हर्षनाथ कविशेखर रसमय मन दय गाव ।
गुणमय एकरदेश्वरसिंह बुझ अभिनव भाव ॥४॥

विशाखा—एदिणा[1] इमाए वअणोवण्णासेण तकी-
अइ उक्कण्ठिदा पिअसहीत्ति ता सुलहं चेअ कज्जंत्ति
उवसप्पामि इमं (इत्युपसर्पति) ।

राधा—(दृष्ट्वा सोच्छ्वासम्) कहं[2] पिअसही । पिअसहि
एत्थउ अविशदु भोदी (इत्युपवेशयति) ।

---

१ एतेन अस्या वचनोपन्यासेन तर्क्यते उत्कण्ठिता प्रियसखीति । तत् सुलभं चैव कार्यम् इत्युपसर्पाम्येनाम् ।

२ कथं प्रियसखी । प्रियसखि अत्रोपविशतु भवती ।

विशाखा—किणो[1] उव्विग्गाव्व लक्खीअइ भोदी ।

राधा—(सोद्वेगं) अप्पणो[2] सहीअणे कीं अकहणिज्जं ता सुणाहि ।

सुनिअ सुचेतनि सहचरि कि कहब निज अविचार ।
कयल रोषकलुषित मन सपहु अनादर भार ॥
बहुविधि विनति कयल पहु सगर रहनि विति गेल ।
कुलिशकठोर हृदय मोर तइओ न परसन भेल ॥
हम उठि गेलहु रोष करि मलिन वदन भेल नाह ।
तइओ न घुरि हम हेरल से मोर अन्तर दाह ॥
कि कहब अपन मनोदुख अपनहि बुझु अनुमानि ।
सरसनाहविरहानल के सहि शकय सेआनि ॥
कि करत सज्जनसङ्गति सुमति नीति उपदेश ।
बिह विपरित सुनिजनहुक उपजय कुमति विशेश ॥
फेरिहम एहन करब नहि करु सखि तेहन उपाए ।
एक बेरि विनति करथि पहु मोर गौरव रहि जाए ॥
हर्षनाथ कविशेखर रसमय मन दय गाव ।
एकरदेश्वरसिंह रस भावक सरस सुभाव ॥५॥

विशाखा—(आत्मगतम्) । सच्चं चेअ तक्किदं मए सुलहं

---

१ किमुद्विग्नेव लक्ष्यते भवती ?

२ आत्मनः सखीजने किमकथनीयम् तच्छृणु ।

कज्जन्ति (प्रकाशम्) सहि राहिए तुमं विणा सिरीकन्हो वि तुमं विअ विरहवेअणां अणुभविअ विक्खित्तचित्तव्व भमई ता सुलहं तुज्झ कज्जत्ति मल्लिआवणं गदुअ चिट्ठदु भोदीअहं वि सरी कन्हं तत्थ आणइस्सं[1]।

(इति निष्क्रान्ताः सर्वाः)

इति चतुर्थोऽङ्कः

अथ पञ्चमोऽङ्कः

(ततः प्रविशति चिन्ताकुलः श्रीकृष्णः)

श्रीकृष्णः—(स्वगतं) कथमिदानीमपि नागता विशाखा ? किमत्र विलम्बकारणम् ? किमु कोपवशेन यत्र कुत्रापि प्रस्थिता प्रियतमा न मिलिता ? किं वा

१ सत्यं चैतत् तर्कितं मया सुलभं कार्यमिति । सखि राधिके त्वां विना श्रीकृष्णोऽपि त्वमिव विरहवेदनामनुभूय विक्षिप्तचित्त इव भ्रमति । तत् सुलभं तव कार्यम् इति मल्लिकावनं गत्वा तिष्ठतु भवती । अहमपि श्रीकृष्णं तत्रानयिष्यामि ॥

बहुतरयत्नेनाप्यनुनयन्नाङ्गीकरोति ? अथवा परचित्तानुतापानभिज्ञा विशाखा तदनुनययत्ने शिथिलादरैवास्ते ? किमत्र विधेयं ? (पुनः सर्वतः परिक्रम्य दृष्ट्वा सहर्षं) इयमागतैव ।

(ततः प्रविशति हर्षोत्फुल्लमानसा विशाखा) ।

विशाखा—कुशलं[1] भअदो ?

श्रीकृष्णः—विशेषतस्त्वदागमनेन । कथय किं साधितमभीप्सितम् ?

विशाखा—अध[2] किं ।

श्रीकृष्णः—विशेषेण कथय ।

विशाखा—भअदोवि[3] अहिअदरं उव्विग्गहिअआ तुज्झकिदे अह्माणं पिअसही राहिआ मल्लिआवणे चिट्ठइ ता भत्ति आस्सासणीआ सा ।

अपि च—

माधव ओरे किकहब तसु अपरुब गति शुनमति ।
तुअ विनु लागु विगतमति ।

१ कुशलं भवतः ।
२ अथ किम् ।
३ भवतोऽप्यधिकतरं उद्विग्नहृदया त्वत्कृतेऽस्माकं प्रियसखी राधिका मल्लिकावने तिष्ठति । तज्झटित्याश्वासनीया सा ।

हिमकर ओरे निरखि कापि कह अम्बर, अन्तर
देख उगल निशिदिनकर।
कइइछ ओरे परस पावि तनु करपूर करु दूर
कओन देल तनु विषचूर।
मारुत ओरे भुजगश्वास निरनय कर, कह घर
देखु कतहु अछि विषधर।
कुसुमित ओरे उपवन निरखि चेतुकि रह धनिकह
देखु लगु दवहुतवह।
रस बुझ ओरे रस भावक जन मन दय गुणमय
हर्षनाथ भन रउमय ॥१॥

अपि च—

सुनिअ वचन गिरिधारी सुकुमारी तुअविनु जीवनहारी
पवनपरस नहि रोचे धृति मोचे कालियगञ्जन शोचे।
चानकिरण तह कापे तनुतापे मन्दरगिरि कर शापे।
मदनवेदन तनु भारी व्रजनारी कर सुमिरन त्रिपुरारी।
अनुछन कर तुअ ध्याने अनुमाने तैँ नहि तेजय पराने।
अचिर चलिअ यदुराजे तसु काजे करिअ यतन दय आजे।
हर्षनाथ कवि गावे मन लावे गुनिजन जानथि भावे ॥२॥

श्रीकृष्णः—(आत्मगतम्) अहो विधेरनुकूलता यत्कृतापराधोऽप्यहमेवाभ्यर्थनीयः संवृत्तः। अहो सरलस्वभा-

वता प्रेयस्याः ! (प्रकाशम्) सखि विशाखे झटिति प्रियाश्वासनाय मल्लिकावनं गन्तव्यम् (इत्युभौ परिक्रमं नाटयतः)

श्रीकृष्णः—(विलोक्य सबहुमानं) अहो मल्लिकावनशोभा ! तथाहि—

सकल भुवनजनमोहन कामा।
उपगतललितलतानवरामा ॥
कुसुमवदन तसु हास विकासा।
बाहुविटप पल्लव कर भासा ॥
गुच्छपयोधर मधु मरन्दा।
रसिक मधुपजन आनन्दकन्दा ॥
कलकिङ्किकल नूपुर रावे।
मधुपावलि मणिमाल सोहावे ॥
तनुउद्वर्त्तन पुष्पपरागा।
शिर सिन्दुर उपगतनवरागा ॥
कुसुमसुगन्धिसुवासित देहा।
मारुतचुम्बितनवल सिनेहा ॥
किसलय कन्दलपुलकितवेशा।
कोकिलकूजितमणितविशेशा ॥
हर्षनाथकविशेखर भाने।
एकरदेश्वरसिंह रह जाने ॥३॥

भवत्वत्रैव मत्प्रेयसी भविष्यति । तद्यावदत्र प्रविशामि । (इति प्रवेशमभिनयति)

(ततः प्रविशति शिशिरोपचारव्यग्रहस्तया सख्या
समनुपविष्टा राधा)

राधा—(संस्कृतमाश्रित्य)

ईर्ष्यातिरेकेण मयाऽल्पमत्या
तिरस्कृतश्चाटु वदन्नतोऽपि ।
भाग्यं तथा मे भविता यथाऽसौ
पुनः प्रसादाभिमुखो हरिः स्यात् ॥४॥

श्रीकृष्णः—(दृष्ट्वा सहर्षं स्वगतं) एषा मत्प्रेयसी किमपि मन्त्रयति । तत्तावल्लतान्तरितो भूत्वा रहस्यसम्भाषणमस्याः शृणोमि । (इति तथा करोति)

राधा—(पुनरपि ईर्ष्यातिरेकेणेत्यादि पठति)

श्रीकृष्णः—(श्रुत्वा आत्मगतं) मन्निमित्त एवैषोऽभिलापः । तदुपसर्पामि (इत्युपसृत्य प्रकाशं) किमेतत्प्रलपसि ? ननु ममैव तथा भाग्यं भवितेति वक्तव्यम् (इति राधिकां करे गृह्णाति) ।

राधा—(ससंभ्रमं स्वगतं) कथं[1] सुदं रहस्समन्तणं अज्जउत्तेण । अहो पमादो ! (इति सलज्जमधोमुखी तिष्ठति)

---

१ कथं श्रुतं रहस्यमन्त्रणं आर्यपुत्रेण । अहो प्रमादः ।

श्रीकृष्णः—(राधाया मुखमुन्नमय्य)

त्वद्वियोगानलज्वालाप्रतप्तं निजकिङ्करम् ।
अयि चन्द्रानने कान्ते सिञ्च वागमृतेन माम् ॥५॥

राधा—(स्वगतं) कधं[1] पुव्वं तहा अणाअरं कदुअ दाणिं धरिदुवअणं भणिदव्वं । (इति तथैव तिष्ठति)

श्रीकृष्णः—

अलं विषादेन सरोरुहाक्षि
कृतागसि प्रेयसि युक्त एव ।
कोपः कृतोऽसौ विरतिं प्रयातु
प्रसीद मैवं भविताऽपराधः ॥६॥

राधा—मए[2] ज्जेव कओ अवराहो या कदाणुणओवि-तमं ण अवलोइदो । ता मरिसदु अज्जउत्तो (इत्यञ्जलिं बध्नाति)

श्रीकृष्णः—(राधामङ्कमारोप्य) प्रिये !

तुअ विशलेष पराभव सजनी जे किछु उपगत भेल ।
यतनहु कहि न शकिअ तत सजनीसे सभ अव दुर गेल ॥

---

१ कथं पूर्वं तथा असादरं कृत्वा इदानीं धैर्यवचनं भणितव्यम् ।

२ मयैव कृतोऽपराधः यत्कृतानुनयोऽपि तत्रावलोकितः । तन्मर्षत्वार्यपुत्रः ।

विधिवश आज देखल हम सजनी पुन परसनमुख तोर ।
लोचनयुगल जुडाएल सजनी तुअमुखचानचकोर ॥
तइअओ प्रेम नहि विचलय सजनी जओ होअ अन्तर दूर ।
गगन जलद लखि हरषय सजनी कानन वसत मयूर ॥
जइअओ पिशुन प्रतिरोधक सजनी छुटय न प्रेमक लागि ।
धरिअ सलिल शतवत्सर सजनी रविमणि तेजय न आगि ॥
करिअ हृदय मम शीतल सजनी लोचन कमल निहारि ।
सीचिअ वचन सुधारस सजनी निज अनुचर अवधारि ॥
हरिपद पङ्कज मधुकर सजनी हर्षनाथ कवि गाव ।
एकरदेश्वरसिंह बुझ सजनी रसमय मन दय भाव ॥७॥

राधा—(सहर्षं) पुणोवि[१] वणविहाराय उक्कण्ठदि मे हिअअं । जइ भअवदो अनुग्गहेण वसन्त उदू णिअवैहवं पकडइस्सदि ।

श्रीकृष्णः—एवमस्तु (इति वसन्तं स्मरति)

[ततः स्मृतमात्रो वसन्तो भगवन्तं बहुमानयन् काननमवगाहमानो निजवैभवं प्रकटीचकार ।] यथा—

नवकुन्दकिंशुकरुचिरचम्पकमल्लिकावलिमालती ।
लसमधुकनीपनेवारिविकसितललितमाधविकालती ॥

१ पुनरपि वनविहारायोत्कण्ठते मम हृदयम् । यदि भगवतोऽनुग्रहेण वसन्तऋतुर्निजवैभवम् प्रकटयिष्यति ।

अतिलसत चारुलवङ्गलतिका कर्णिकार सोहावही ।
नववकुलवकहुलनागकेसरसरसजनमन भावही ॥
पुन कोकिलाकलमधुपकाकलिकलितकानन शोहही ।
जनि कुसुमसौरभभारमन्थरअनिल मानस मोहही ॥
नवमलयवातसमिद्धमनसिजदहन युवजन होमही ।
निजलाजमानविवेकधैरज करि पुरोधस सोमही ॥
ऋतुराजवैभवपरमसौभगप्रकट जग जन जानही ।
वृषभानुनन्दिनि निरखि कानन सफल लोचन मानही ॥
पुन करति कन्दुककेलि हर्षित कृष्णनेह बढावही ।
कवि हर्षनाथ सनाथजीवन युगलपद मन भावही ॥

श्रीकृष्णः—किन्ते भूयः प्रियमुपकरोमि ?

राधा—आदोवि[१] वरं पिअं होइ ? तहा वि इदं होदु ।

(संस्कृतमाश्रित्य)

धराधरो वर्षतु वारिकाले
वर्णास्स्वधर्माभिरता भवन्तु ।
धर्माभिगुप्ता पृथिवी नरेन्द्रै-
र्भूयात् सशस्या रसिका रमन्ताम् ॥८॥
निजनिज धरम रमथो सभ लोका
कबहु न पाबओ सजन शोका ॥

१ अतोऽपि परमं प्रियम्भवति ? तथाऽपि इदम् भवतु ।

बरिसओ समय सलिल जलवाहा ।
करओ सकल जन प्रेमनिवाहा ॥
कविजन काव्य रचओ सानन्दा ।
करओ रसिकजन वचनविनोदा ॥
खलजन राजसदन नहि आवे ।
अनुछन गुणिजन सत्कृत पावे ॥
धरणी शस्यभरलि समकाला ।
पालथु धरम धरणि क्षितिपाला ॥
हर्षनाथ कवि मन दय गावे ।
एकरदेश्वरसिंह बुझ भावे ॥१०॥

श्रीकृष्णः—एवमस्तु (इति निष्क्रान्ताः सर्व्वे) ॥

इति पञ्चमोऽङ्कः ॥

इति श्रीहर्षनाथशर्मविरचितं माधवानन्दनाम नाटकम् ॥

अथ राधाकृष्णमिलनलीला[1]

लम्बोदर गजवदन, शशिभूषण पीवरकाय ।
आखुगमन रमणीयतन, हरसुत रहहु सहाय ॥
मिथिलाधरणीनाथरुद्रसिंहात्मजन्मनः ।
श्री गुणेश्वरसिंहस्य विवेकौदार्य्यशालिनः ॥२॥
निदेशेन हरेर्लीला हर्षनाथेन तन्यते ।
ब्रजनाथतनूजेन मैथिलेन यथामति ॥३॥
शापाऽवसाने श्रीदाम्नः शतसंवत्सरे गते ।
राधया सह संयोगं कर्तुं कृष्णो मनोदधे ॥४॥

सिद्धाश्रम गणनायकधाम
माधव पञ्चदशी तिथि आयो—
सह यादवगण श्याम ॥
सुरनर किन्नर सिद्ध आदिगण,
गणपति पूजन काम ।

---

१ ब्रजवासिनर्तक द्वारा अभिनयार्थ रचयिताक आज्ञा से भाषान्तर कयल गेल ।

श्रीऋद्धिनाथ झा

पूजासम्भृति करगहि लायो,
किये सभा अभिराम ।
जो कोउ सुनत होत पुलकित तन,
चलत सकल जन धाय ।
भनक पड़ी राधा शरवन में,
गई अधिक अकुलाय ॥
हर्षनाथ हरि मिलन मनोरथ,
सिन्धु मगन भउ वाम ।
निरखि सखीजन कहति विकल मन,
वचन विरह परिणाम ॥१॥

"फिर हरि बहुरि दरश ना दीहैं"
अबतँ भयो त्रिभुवन को ठाकुर,
क्यों करि व्रज सुधि लीहै ।
अचरज नहि त्यजो हरि व्रज को,
श्याम हृदय अति खोटो ।
पिक निज बन्धु काक जन तेजत,
लगत हृदय नहि चोटो ।
क्योंकरि नृपति सुतारति हरि को,
चित बसिहों व्रजबाला ।
सचकित व्रजवनिता को चितवत,
व्यतीत भयो वह काला ।

अति निर्लज्ज लजात नाहि मन,
फिर धावत हरि ओरे ।
हर्षनाथ धैरज धरु राधे,
मिलिहों नन्दकिशोरे ॥२॥

हरि विनु या व्रज की गति कैसी ।

भूषणवसन भरी सुन्दर तनु होत जीव विनु जैसी ।
तजि निज काज ध्यान करि बैठत रहत निचल सब ऐसो ।
योग अङ्ग यम आदि समाधिअ आत्मलाभ जस जैसो ।
कब वह समय बहुरि पुन होइहैं वृन्दावन हरि ऐहों ।
वंशीवट यमुनातट ठाड़े वंशी टेर सुनैहों ।
चन्द्र किरन मलयानिल चन्दन परस लगे अति फीको ।
भूषण वसन असन विष सम भउ भवन विपिन सबही को ।
पिक कल श्रवन दहत विकसितवन नयनदाह उपजावे ।
विहविगड़े अक्रूर क्रूर भउ हर्षनाथ कवि गावे ॥३॥

सखि मम भई मति अति मन्द ।
क्रूर रूप अक्रूर आयो ले गयो व्रज चन्द ।
धायकैं नहि पकड़ि लाई रही क्यों करि लाज ।
होत अति अनुताप अपनो सुमरि करनी आज ।
हम अभागिनि रही निरखति, कही कछु नहि बात ।
कुलिशतैं अति कठिन छाती विहरि क्यों नहि जात ।

होत मन उड़ि जाँउ कीधों पङ्ख क्यों नहि पाए।
हर्षनाथ सनाथ करिहौं अचिर यादव राए ॥४॥

श्लोक—विलोक्योत्कण्ठितां राधां कृष्णकृष्णेति भाषिणीम्।
विदग्धां ललिता प्राह वचनं श्रुतिशीतलम् ॥५॥

सुन्दरि कलुक सोच मत कीजे।
यदुनायक सङ्गम परिबोधक प्रगट सगुन सुन लीजे।
बाम नयन फड़कत मन हुलसत कुचअञ्चल भुज डोले।
मन अनुकूल सुगन्ध पवन बह काक पुरुब दिस बोले।
सिद्धाश्रम यदुनायक आयो यह सब तरु सुनि आवे।
कीधों ब्रजजन मिलन कारन मेरे मन यह भावे।
ब्रजजन गमन सुनिअ तहाँ सबतरु जहाँ आयो यदुराजा।
हर्षनाथ विह अवसर दीन्हों परिपूरन तुअ काजा ॥५॥

श्लोक—श्रुत्वा सिद्धाश्रमं प्राप्तं कृष्णं सर्वजनैस्सह।
नन्दादयो ययुस्सर्वे राधिका च सखीवृता ॥७॥
ब्रजवासिजनम्प्राप्तं दृष्ट्वा श्रीकृष्णवल्लभा।
रुक्मिणी वचनम्प्राह श्रीकृष्णं हाससंयुतम् ॥८॥

कहाँ कओन वृषभान किशोरी।
समझ पड़े मेरे मन तेरो वह बालापन जोड़ी ॥

शरदचन्द्र बदनि मृगलोचनि नीलवसन तनगोरी।
जलद निकट दामिनि पर हिमकर मण्डल खञ्जन जोड़ी॥
मलय पवन वर्द्धित मदनानल शशि उपदेशित वामा।
लाज छवन करि चली भवन तें तुअ सुख दरशन कामा॥
बालापन जेहि साथ गमायो मुदित दिवस निशि सारी।
हर्षनाथ निकटहिसों आयो अब चितवहु निज प्यारी ॥६॥

श्लोक—निवार्य्य रत्नकन्देवी वयस्याभिस्त्वरान्विता।
प्रथमम्पूजयामास राधिका गणनायकम् ॥६॥

जय जय गिरिजा तनय गणेशा।
तुअ सुमिरन सब मिटय कलेशा॥
एकरदन गजवदन सुरेशा।
लम्बोदर हिमकर धर शीशा॥
वेदबाहु बर मूषकगामी।
विघ्नविनाशन त्रिभुवन स्वामी॥
रक्तवरन पीवर तनुधारी।
खर्व्वरूप सेवक हितकारी॥
ब्रह्मतेजमय मङ्गलधामा।
हर्षनाथ परिपूरहु कामा ॥७॥

विप्रजमायो राधिका करि पूजन मन लाय।
गणनायक गिरजातनय कह्यो वचन हरपाय ॥१०॥

श्लोक—तव पूजा जगन्मातर्लोके शिक्षाकरी शुभे ।
ब्रह्मस्वरूपा भवती कृष्णवक्षःस्थलस्थिता ॥११॥

वट तट सुर नर मुनि निकट रक्षक भाषत जाए ।
गणपति पूजन की कथा अन्तर अति अकुलाए ॥१२॥

चतुरानन हरि शेश महेशा ।
सुर मुनि नर पति देश विदेशा ॥
सुरकामिनि नृप कामिनि कोरी ।
करि अवहेलन गोपकिशोरी ॥
सखी सहित रक्षक विनिवारी ।
गणपतिपूजन कर ब्रजनारी ॥
अति अनुचित यह विषय नवीना ।
निरखि आय विनिवेदन कीना ॥
हर्षनाथ जड़मति की जाने ।
ब्रह्मरूप ब्रजनागरि माने ॥८॥

दूत वचन सुनि सिद्धगण, मुनि सुरगण हँसि दीन ॥
तब हिलि मिलि सब जायकें । क्रम ते पूजा कीन ॥१३॥

कहति वचन हिम शैल कुमारी ।
करि अङ्कम राधा सुकुमारी ॥

दीन्हो शाप भक्त श्रीदामा ।
ताको अन्त भयो परिनामा ॥
मम वर पाय करहु हरिसङ्गा ।
निज अभिलाष मनोभव रङ्गा ॥
तुअ यदुपति नहि करहुँ वियोगा ।
शशि चन्द्रातप सम संयोगा ॥
जो जन तुअ मम भेद देखावे ।
सो जन परम नरक फल पावे ॥
गिरिजा वचन विनोदित राधा ।
मेटहु हर्षनाथ भवबाधा ॥९॥

गोपीजन गिरिजा वचन राधा तनु शृङ्गार ।
भरे मोद विकसित वदन कीन्हो विविध प्रकार ॥१४॥

भयो ललित राधा तनु भासा ।
सिद्धालय अद्भुत परगासा ॥
अचरज मनो अमर नर नारी ।
तब समुझाय कहो गिरधारी ॥
श्री दामा कृत शाप संयोगा ।
शतवत्सर मम भयो वियोगा ॥
विकलि रही राधा दिनराती ।
क्षीण भई अनुपम तनुकाँती ॥

शाप विमोक रूप निज पाई ।
आज प्रकाश कियो अधिकाई ॥
सुनि हरि वचन सकल जनधाई ।
राधा चरण प्रेम अधिकाई ॥
जाए सकल जन कीन्ह प्रनामा ।
मुरुछि रही भूतल सतभामा ॥
अति सुन्दरि जत नारि नवीना ।
रतन मुकुर कर श्वास मलीना ॥
राधाचरण सरोरुह शोभे ।
हर्षनाथ मानस अलि लोभे ॥१०॥

चतुरानन राधापद पेखी ।
कहो वचन कछु बिमल विशेखी ॥
कीन्हो वहुतप पुष्कर जाई ।
तुअ पद दरशन तदपि न पाई ॥
तब नभवचन विमल अवगाही ।
कल्प वराह सिद्धाश्रम माँही ॥
होइ हैं मम पद दरशन तोही ।
सो सभ सफल भयो अब मोही ।
तब शिव वचन कहो हरखाई ।
भरकर प्रेम हृदय अधिकाई ॥

सुर मुनि सिद्ध योगि मनुध्यावे ।
चार वेद जेहि पार न पावे ॥
तसु उर महँ तुअ सतत निवासा ।
कोन विध तुअ गुण करूँ प्रकासा ॥
कहहिँ अनन्त विमल तव बानी ।
जेहि सुर नर मुनि वेद न जानी ॥
सो हरि सन्तन तुअ भय माने ।
तुअ महिमा को जड़मति जाने ॥
देवी देव सकल शिर नाई ।
हर्षनाथ राधागुण गाई ॥११॥

बहुत दिवस हरि अन्तर भयो हरि समाज फिर पाए ।
नन्द आदि ब्रजवासि जन कहहिँ कृष्ण हरखाए ॥१५॥

पुरुब जनम बहुविध तप कीन्हों ।
ताते तुअ सङ्गति कर लीन्हों ॥
कत विध दोष पड़ी ब्रजवासी ।
शत बरसर तेजो अविनाशी ॥
तदपि कठोर जीव नहि छूटो ।
जीवन फल तुअ दरशन लूटो ॥
तुअ पद छोंड़ि जाउँ अब नाही ।
राखहु हरिनिज सङ्गत माँही ॥

तब हरि कहहिँ सुनहुँ व्रजराई ।
सुनहु विशेष यशोमति माई ॥
अति सुन्दर व्रजभूमि विशाला ।
व्रजजन सहित बसहुँ कछु काला ॥
व्रजजन सहित मुक्ति सालोका ।
दीहौँ तुअ करिहौँ गतशोका ॥
हर्षनाथ सुनि यदुपति बानी ।
व्रजजन सकल मनोरथ मानी ॥१२॥

यह अवसर हरि वचन तैं पावि सकल मनकाम ।
करि पूजन गणनाथ को गए सकल निज धाम ॥१६॥

श्लोक—अंशेन देवो देवीभीरुक्मिण्याद्याभिरेव च ।
प्रययौ द्वारकां रम्यां तस्थौ सिद्धाश्रमे स्वयम् ॥१७॥

दोहा—तब हरि राधा सङ्ग करि कीन्ह कुशल संवाद ।
आलिङ्गन करि मोद भरि तेजो हृदय विषाद ॥१८॥

चौपाई

विहसि वचन वृषभान दुलारी ।
तब पूछति राधा गिरिधारी ॥
मङ्गल रूप कहत सभ लोका ।
क्यौं करि तुअ मन सम्भव शोका ॥

तदपि लोक रीति जग पेपी ।
पूछौँ हरि तुअ कुशल विशेषी ॥
रुक्मिणि नारि रमणरससागर ।
सत्यभामा प्रिया सुन्दर नागर ॥
शतवत्सर दिन दिन कर लेखी ।
निज मङ्गल हरि कहहुँ विशेखी ॥
कुब्जा सङ्गति अति सुख पाई ।
मातुल वध कीन्हौं यदुराई ॥
महाभारत मैं सम्मत दीन्हा ।
कुन्ती सुत के सारथ कीन्हा ॥
पाण्डुतनय को विजय सहाई ।
दुर्य्योधन दल भङ्ग कराई ॥
कहाँ गई हरि तुअ समताई ।
पच्छपात जग महँ दरशाई ॥
नाथ अनेक सुनिअ महरानी ।
तामे कामजननि पटरानी ॥
जाम्बवती सुन्दरि गुणधामा ।
परम पिआरि सुनिअ सतभामा ॥
यासु नेहवश जिति बड़ भाई ।
सुरपुर जाए कलपतरु लाई ॥

सभ में कौन अधिक गुणनारी ।
सत्य कहहुँ के प्रेम पिआरी ॥
या वश हरि विसरेँ व्रजनारी ।
यह करि विवश भयो सुकुमारी ॥
तब ललितादि सखीजन धाई ।
करि रोदन यदुपति समुझाई ॥
हे यदुनाथ जिआवहुँ राधा ।
क्योँ अब दीन्हों दूजो बाधा ॥
करहुँ कृपा मम सखी जिआई ।
हम सभ सकल उलटि बन जाई ॥
सुधा दृष्टि लखि हरि निज प्यारी ।
चेत कराय दियो गिरिधारी ॥
हर्षनाथ राधासुखपेषी ।
भयो सखीजन हर्ष विशेषी ॥१३॥
सखी सहित वृषभानकुमारी ।
उत्तर वचन कहो गिरिधारी ॥
सूर्पनखा दण्डक बन आई ।
राम रूप मम प्रेम जनाई ॥
कुब्जा रूप तासु मन कामा ।
पूरन करन गयो तसु धामा ॥

कंस आदि नरपति तनु जेते ।
देव निहत सुररिपु सभ तेते ॥
धरनी विकल भई तसु भारा ।
तासु हरन मेरो अवतारा ॥
ताते हन्यो सकल नरनाहा ।
कीन्हो धरनि काज निर्व्वाहा ॥
नर नारायण मम रूप दोई ।
तामे नर अर्ज्जुन तन होई ॥
सफल करन सावित्री वचना ।
निज तनु अर्ज्जुन सारथ रचना ॥
मम नहिँ शत्रु मित्र नहि कोई ।
सुकृत निरत जन मम हित होई ॥
निज सेवक जन सदा अधीना ।
उच निच काज बहुत हम कीना ॥
देवशर्म्मकृत सुरपतिशापा ।
तातें खण्ड्यो तसु बलदापा ॥
भक्त शिरोमणि मम श्रीदामा ।
तासु वचन पालन मन कामा ॥
शतवत्सर तुअ कठिन वियोगा ।
लीन्हो सहि पुन विह संयोगा ॥

रुकमिनि आदि सकल मम नारी ।
तुअ मूरति सभ सुनहुँ पियारी ॥
तुअ विच्छेद पलक गम नाहीं ।
करहुँ विचार देखहुँ मन माहीं ॥
हम तें कलुक पड़ी यनि दोशा ।
चमहुँ कृपा करि तेजहुँ रोशा ॥
हर्षनाथ भन हरि उपदेशा ।
भयो सकल मह मोद विशेशा ॥१४॥

दोहा

तब राधा यदुनाथ से कहति हृदय अभिलाश ।
वृन्दावन महँ जायकेँ करहुँ नाथ फिर रास ॥१६॥

राधावचन विचारि तब यदुनन्दन हरखाए ॥
निज स्यन्दन गोलोक तैं लीन्हो त्वरित मङाए ॥२०॥

श्लोक—रथेन तेन भगवान् पुनर्वृन्दावनं ययौ ।
तत्र गत्वा निशाकाले विजहार जले स्थले ॥२१॥

आनन्द नन्दकिशोर आज व्रजरास रचो ।
मालति कुन्द कुमुद परिमललय मलय पवन वह धीर ॥
पूरन चन्द्रकिरण चकमक कर विकसित कुञ्ज कुटीर ॥

पिककूजित अलिगुञ्जित भूषणसिञ्जित चौदिश पूर ।
गावत गीत मधुर धुनि सखिगण जनम ताप कर दूर ॥
अलक विरचि शिरसिन्दूर लोचनकज्जल उरबिच हार ।
घरघरसँ निकसो व्रजवनिता नूपुर कर झँझकार ॥
वंशी अधर मुकुट शिर कछनी कटितनु ललित त्रिभङ्ग ।
नटवर भेष कियो यदुनन्दन विहरत राधासङ्ग ॥
जपतप नियम करत कत मुनिजन जेहि पद दरशन हेत ।
हर्षनाथ भन व्रजजनता को सहज दरश करि लेत ॥२५॥

दोहा—नन्द यशोदा आदि सभ व्रजजन लखि यदुनाथ ।
वृन्दावन निज अङ्कभरि हिलिमिलि भयो सनाथ ॥२२॥

इति श्री राधाकृष्णमिलनलीला सम्पूर्णा ॥

॥ ॐ नमो राधाकृष्णाभ्याम् ॥

उज्झटगीतसंग्रह

श्रीवनदुर्गाक

(१)

जय जय विन्ध्यनिवासिनि
    तनुरुचि निन्दितदामिनि ॥१॥
आनन शशधरमण्डल
    तीनि नयन श्रुतिकुण्डल ॥२॥
कनककुशेशय आसन
    वसय निकट पञ्चानन ॥३॥
शङ्ख चक्र निरभय वर
    कर धरु शशधरशेखर ॥४॥
तुअ पद पङ्कज मधुकर
    हर्षनाथ भन कविवर ॥५॥

श्रीताराक

(२)

जय जय भयहरनि मञ्जुहासिनि,
    मधुदमन कञ्ज आसन ।

शिवसेवित पद कमल तारिणी ॥ध्रु०॥
    नवल जलद मञ्जु भास,
ज्वलित प्रेत भूमिवास
    मुण्डमाल अति विलास विपदहारिणी ॥१॥
तीन नयन अरुन वरन,
    विश्वव्यापि सलिल सरन ।
ललित धवल कमल युगल चरणधारिणी ॥
    लम्ब उदर खर्व रूप,
द्वीपि अजीन कटि अनूप ।
    चपल रसन विकट दशन दुरितदारिणी ॥२॥
मुद्रापञ्च लसत माथ,
    खङ्ग काति दहिन हाथ ।
वाम मुण्ड कुवल मौलि अक्षोभधारिणी ।
    भनत हर्षनाथ नाम,
जनक नगर नृपति काम ।
    पुरिअ परम करुणधाम भक्ततारिणी ॥३॥

श्री कृष्णजन्मोत्सव

सोहर

(३)

(पद) अविरल जलधर गरजत, घनरस बरिसत रे।
दादुल संकुल रभसत, दामिनि चमकत रे ॥ललना॥

(छ०) तड़ित चमकत जलद गरजत, करत दादुल सोर ओ।
तिमिर सङ्कुल करत आकुल निशिथभादव घोर ओ ॥१॥

(पद) अवतरु देवकिनन्दन जन सुख चन्दन रे।
सुरनर मुनि कृतवन्दन कंस निकन्दन रे ॥ललना॥

(छ०) अवतरल यदुकुल कमल दिनकर सकल जन सुख कन्द ओ।
नन्द नयन चकोर सम्मद पुरन शारद चन्द ओ ॥२॥

(पद) अमल कमल दल गञ्जन लोचन खञ्जन रे।
त्रिभुवन आपद भञ्जन जग अनुरञ्जन रे ॥ललना॥

(छ०) जगतरञ्जन विपदभञ्जन वदनगञ्जित चान ओ।
नवल जलधर रुचिर तनुवर विजित मृगपद मान ओ ॥३॥

(पद) नार-छिनाओन दगरिन कतधन पाओल रे।
हरषित गोप वधूजन सोहर गाओल रे ॥ललना॥

(छ०) हरषि गावहि नगर नागरि काहिँ सुरनर ज्ञान ओ।
सुनत निश्चल रहत खगमृग छुटत मुनिजन ध्यान ओ ॥४॥

(पद) मनि मानिक मुकता कत कञ्चन अभरन रे।
जत छल नन्द भवन धन पाओल गुनिजन रे ॥ल०॥

(छ०) तुरग गजरथ कनक मानिक रतन मुकता साथ ओ।
पावि नटभट गणक चटपट भेल सकल सनाथ ओ ॥५॥

(पद) सुरगण सहित पुरन्दर करि शुभडम्बर रे।
देखन यदुकुल सुन्दर आएल अम्बर रे ॥ल०॥

(छ०) बरिस सुरगण कुसुम परसन मुदित पुलकित अंग ओ।
देव दुन्दुभि बाजु अम्बर होत मंगल रङ्ग ओ ॥६॥

(पद) हर्षनाथ मन मनदय हरि परसन भय रे।
करथु नृपति लक्ष्मीश्वर जन धन उपचय रे ॥ल०॥

(छ०) हर्षनाथ सनाथ करि यदुनाथ त्रिभुवनधाम ओ।
पुरथु मिथिला नगर नायक सकल अभिमत काम ओ ॥७॥

उचिती

(४)

सुपुरुष हृदय विचारि रे
सुनिअ वचन अवधारि रे ॥१॥

सखि मोर परम अजान रे
राखब-हिनक अभिमान रे ॥२॥

परय-हिनक-जँओ दोष रे
करिअ तकर जनु रोष रे ॥३॥
सहय लाख अपराध रे
सुजन नेह नहि बाध रे ॥४॥
हर्षनाथ कवि भान रे
मिथिलापति रस जान रे ॥५॥

(५)

देखल सुहागिन रामा।
पूरल लोचनकामा ॥१॥
आनन शारदचन्दा।
लखि मुनिहुक मतिमन्दा ॥२॥
अनुपम भौंह कमाने।
लोचन विषमय बाने ॥३॥
मधुर सुधारस भासे।
रसमय वचन विलासे ॥४॥
कुचयुग पङ्कज काँती।
रोमावलि अलि पाँती ॥५॥
उरु कदलीसम सोहे।
मन्द गमन मन मोहे ॥६॥

हर्षनाथ कवि भाने।
मिथिलापति रस जाने ॥७॥

(६)

अविरल सरस वरिस जलविन्दु।
जलधर निकर मगन भेल इन्दु ॥१॥
कुन्द कुसुद परिमल लय धीर।
सरस समय वह मलय समीर ॥२॥
नाचत शिखिगन उपवन जाए।
पहु परदेश मोहि किछु न सोहाए ॥३॥
जे निश पहुँसँग छन सम भान।
से भेल तनि विनु कलप समान ॥४॥
एहन निठुर पहु आव न गेह।
अनुछन मदन दहन दह देह ॥५॥
रसमय हर्षनाथ कवि भान।
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह रस जान ॥६॥

(७)

प्रथम समागम जिव मोर काँप।
जनि सर मदन चढ़ाओल चाप ॥१॥
हम न जाएब सखि सुपुरुषपास।
सुमरि सुमरि हिय बढ़य तरास ॥२॥

कमल कली मधुकर अति जोरा ।
हरिपुनु केलि करय निहोरा ॥३॥
हर्षनाथ सुपुरुष अभिरोष ।
मालति छमिय भमर सभ दोष ॥४॥

(८)

समय वसन्त पिआ परदेश ।
असह सहब कत विरह कलेश ॥१॥
सुमरि सुमरि पहु रहय न धीर ।
मदन दहनदह दगध शरीर ॥२॥
अलिकुलगुञ्जित कुसुमितकुञ्ज ।
लागु नयन जनि पावकपुञ्ज ॥३॥
शीतल पंकज चम्पकमाल ।
हृदय दहय जनि विषधरजाल ॥४॥
रसमय हर्षनाथ कवि भान ।
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह रस जान ॥५॥

(९)

हम कि कहब सखि तोरा चित चोरा
आनि मिलाविअ मोरा ॥१॥
पहु विनु चित नहि थीरे, नहि धीरे
देह दह दहिनसमीरे ॥२॥

कओन कुमति मोहि भेला, विह देला
पहु विमनस करि लेला ॥३॥
जे धनि कर गुरु माने, नहि जाने
तसु मन मनु कि पखाने ॥४॥
फेरि न करब इह काजे, यदुराजे
जओ पुनि होएत समाजे ॥५॥
हे सखि ! करह उपाई, यदुराई
एक बेरि देहु मनाई ॥६॥
हर्षनाथ कवि भाने, परमाने
रस भावुक रस जाने ॥७॥

(१०)

आज देखल एक कामिनि रे,
नव दामिनि रेहा ।
नील वसन लखि अवतरु रे,
जनि जलद सन्देहा ॥
तड़ित वेकत होअ निअ रुचिरे,
परगासन कामा ।
तसु तनु लखि लज्जित होअ रे
पुनु पुनु गतधामा ॥

विशत गिरिशनयनानल रे,
जनि लज्जित चाने।
तसु मुख लखि नहि बड़ जन रे,
सह निय अपमाने॥
अमल कमल दल गञ्जन रे,
लखि नयन विलासे।
जनि लज्जित भय खञ्जन रे,
कर विपिन निवासे॥
हर्षनाथ कवि शेखर रे,
रसमय इहो गावे।
लक्ष्मीश्वरसिंह गुणमय रे,
मनदय बुझु भावे॥

(११)

तड़ित लता सम सुन्दरि सजनी देखल अति अभिराम।
लोचन जुगल जुड़ाएल सजनी लखि तसु तनु अनुपाम॥१॥
वदन मनोरम राजित सजनी लोचन युगल विशेष।
जनि सरसीरुह वैसल सजनी मधुकर युगल सुवेष॥२॥
चललि रोमावलि त्रिपथरि सजनी लोचन खञ्जन लोभ।
लखि नासिक पन्नगरिपु सजनी कुच गिरितट अपिशोभ॥३॥

चरण रवत नव नूपुर सजनी लागत अति अभिराम।
जनि सरसिज दल रवकर सजनी मदकल मानस धाम॥४॥
जगत जननि पद सेवक सजनी हर्षनाथ कवि गाव।
रसमय लक्ष्मीश्वरसिंह सजनी नृप बुझु मन दय भाव॥५॥

(१२)

आय अषाढ़ मदन तन बाढ़,
बरिसत मेघ विरह भेल गाढ़।
गरजत घन तन लहरत मोर,
परदेश विलमहु नन्दकिशोर॥१॥
रहब कौन भाँती आलि हुनि श्यामसुन्दर
विनु किछु न सोहाती॥ध्रु०॥
सावन सखि सब झुलत हिलोर,
केलि करहु सखि पिया सँग भोर।
चुनरि भिजल सखि पहिरु बनाय,
विरह अधिक तन सहलो न जाय॥२॥
सोचब दिनराती अलि हुनि श्यामसुन्दर
विनु किछु न सोहाती॥ध्रु०॥
भादव के घन गरजत घोर,
व्रज पर छाय घटा चहुँ ओर।

झिंगुर निशिदिन बोलत जोर,
यौवन दादुर बोलय मोर ॥३॥
मदन मनोरथ माँती अलिहुनि श्यामसुन्दर
बिनु किछु न सोहाती ॥ध्रु०॥
आसिन सखि हे आएल कन्त,
सुख सर से दुख भय गेल अन्त।
हर्षनाथ भन मन में आस,
प्रीति लगहु हो प्रीतम पास ॥४॥
जुड़ाएल छाती अलिहुनि श्यामसुन्दर
बिनु किछु न सोहाती ॥ध्रु०॥

(१०)

सखि ! सखि अनुगत भेल ऋतुराजे ॥ध्रु०॥
पिक कुल कल अनुरञ्जित नवदल,
कुसुमित उपवन छाजे ॥१॥
अलि कुल कलित ललित कुसुमाकुल,
विलसित बल्लि अनेके।
एहन समय पहु परदेस थिर रहु,
कि कहब तनिक विवेके ॥२॥
नृप तनयापति गोपसुता रति,
करु कोन परियहुवाले।

पसुपसुता कृत रहथि तिमिर नित,
चिंतित भेल से काले ॥३॥
तेजिगेल यदुपति कयल उचित अति,
असित हृदय थिक आँके।
कोकिल निज हित अनु दिन परिचित,
नवदल तेजथि काके ॥४॥
धीरज धय रहु अचिर मिलत पहु,
होएत बिरहअवसाने।
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझथि रस
हर्षनाथ कवि भाने ॥५॥

(१४)

सखि सखि कहिअ कओन परकारे।
पहु परदेश गेल सरस समय भेल हनय मदन दुरबारे ॥१॥
चान किरन तन दहय समीरन चन्दन चम्पक दामे।
किकरब के कह विमुख देखि विह सकल जगत भेल बामे ॥२॥
नलिन बिजन तन विषम गरल सन श्रुतिदह कोकिल गाने।
मदन वेदन तन असह सहइ कत छन छन निकसत प्राने ॥३॥
धैरज धय रहु अचिर मिलत पहु होयेत बिरह अवसाने।
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥४॥

(१५)

किछुय दुहुक प्रथम अनुरागे ।
प्रथम विलोकन अवधि दुहुक मन कत अनुछन रसजागे ॥१॥
मदन विषम शर दलित दुहुक तन दुहु मन वसु एक काजे ।
दुहुक मिलित मन रहय सतत छन आँतर भय रहु लाजे ॥२॥
विरह दहन कत विषम पराभव हृदय धरय जत गोई ।
खञ्जरीट चापल मद गञ्जन नयन वेकत तत होई ॥३॥
मलय पवन शशि किरन सरोरुह परस दुहुक तन छीने ।
असह सहओ कत रहय विकल नित एकओ न अपन अधीने ॥४॥
प्रथम वचन नहि कहय एकओ नहिँ दुहु मन करि अभिमाने।
नृप लच्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥५॥

(१६)

करिअ न हृदय कठोर ।
अवगुन परिहरि परसनि भय धनि मानिनि पूरिअ अभिमत मोर ॥१॥
सरस वसन्त निहारि जगत भरि परिहरि प्रिय जन दोष ।
नागर नागरि रमय रइनि भरि तेहि धनि तेजह न रोष ॥२॥
एक बेरि वचन अमिअ सम भाषिअ पिक कुल तेजओ गान ।
सरस विलास हास परगासिअ अमिअ तेजओ अभिमान ॥३॥
याचक जन नहि करय विमुख धनि मन गुनि बुझिअ सेआनि।
मधु तेजि मधुकर फिरय कंटक डर केतकि काँ थिक हानि ॥४॥

यामिनि वितिगेल भोर समय भेल आब तेजहु धनिमान ।
नृप लच्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भान ॥५॥

(१७)

माधव देखल अपरुप रूपे ।
नील वसनि धनि जलद वलित जनि थिर रहु तड़ित स्वरूपे ॥१॥
सिन्दुरविन्दु भाल पर तापर रचित चिकुर परिपूरे ।
राहुदशन डर जाए नुकाएल तिमिर निकर जनि सूरे ॥२॥
नूपुर पद्मराग पद शिञ्जित ललित नटन श्रुति कुञ्जे ।
नयन भेद कह पुलक अंग मह कनक विशेषकपुञ्जे ॥३॥
कुच युग कनक कलश मद गञ्जन निरखि उपजु मन शंका ।
तीनि भुवन जनि जीति मदन जनि कयल अधोमुख डंका ॥४॥
तसु तनु रचल मदन जनि रसमय की रस लम्पट चाने ।
जप तप निरत सतत रस वञ्चित की विह रचत अज्ञाने ॥५॥
नव पल्लवगञ्जन मनरञ्जन अधर विम्ब निरमाने ।
नृप लच्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भाने ॥६॥

(१८)

किअ बैसलि मुख फेरि ॥ध्रु०॥
मुख से चीर दूर करि सुन्दरि हरखि हेरु एक बेरि ॥१॥
आनन मलिन निहारि तोहर धनि घुमय फिरय सब ठाम ।
तुअ मुख चान चकोर मोर मन कतहु न कर विसराम ॥२॥

चान किरन चम्पक दल चन्दन कोकिल पञ्चमगान।
तुअ विगलित मन हेरयित अनुछन लगइछ अनल समान ॥३॥
मोर अपराध परल जँओ सुन्दरि किअ परितेजह हार।
आनक दोष आन परि तेजह केकह एहन विचार ॥४॥
यामिन वित गेल भोर समय भेल अबहु तेजु धनि मान।
नृप लक्ष्मीश्वरसिंह बुझथि रस हर्षनाथ कवि भान ॥५॥

(१६)

जाइत देखल नवनागरि रे नवकाञ्चन रेहा।
त्रिभुवन विजय मनोरथ रे जनि रचल विदेहा ॥१॥
लसत कुटिलकच लोचन रे केकह उपमाने।
मीन युगल बनसी लय रे बेधल पचवाने ॥२॥
ललित कोर मुख पंकज रे छवि देत विशेशा।
जनि पूरन शारद शशि रे दामिनि परिवेशा ॥३॥
युवजन मानस हाटक रे अनुछन करचोरी।
तें जनि कुच-युग वाह्लल रे दृढ़ कंचुक डोरी ॥४॥
हर्षनाथ मनदय कह रे नागरि अनुपामा।
पुरुब जनम तप देखल रे लोचन अभिरामा ॥५॥

॥ इति हर्षनाथकाव्यग्रन्थावली समाप्ता ॥